Only cover printed at the Hitchintak Press, Ramghat, Benares City:1940

माणिक ग्रन्थमाला नं०-११

ओ३म्

संयोगता-हरण

अथवा

पृथ्वीराज नाटक

राजपूतों की बहादुरी, मेवाड़ का उद्धारकर्ता, रानासाँगा और बाबर, भारत की प्राचीन झलक (चारभाग) हल्दी-घाटी की लड़ाई, रानाप्रताप, भीष्मपितामह, भारत की लक्ष्मी इत्यादि ग्रन्थों के रचयिता—

बाबू हरिदास माणिक

द्वारा लिखित

मनेजर पं० शङ्करदत्त बाजपेयी द्वारा

भारतजीवन प्रेस में छपाया।

प्रकाशक

माणिक कार्यालय

काशी।

प्रथम बार १०००] १९१५ [मूल्य आठ आना
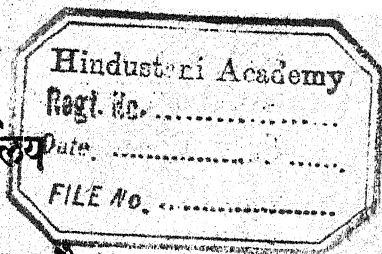
हमारी दो चार बातें।

काशी की नागरी नाटक मंडली हरिश्चन्द्र राना प्रताप, कलियुग, संसार स्वप्न और पांडव प्रताप इत्यादि खेल खेल चुकी है। मंडली में काशीनरेश तथा अन्य कई एक महाराजाओं और अंग्रेज अफसरों ने समय २ पर पधार कर इसकी शोभा बढ़ाई है। हिन्दी साहित्य के लिये यह बड़े गौरव की बात है कि भारतनरेश लोग भी इसके प्रति अपना अनुराग दिखाने लगे हैं। अच्छे २ हिन्दी नाटकों का लिखना लिखाना प्रत्येक हिन्दी साहित्य सेवियों का कर्त्तव्य है। मैने स्वयं कई एक ऐतिहासिक नाटकों के लिखने का बिचार किया है, पर देखें ईश्वर इसमें कहां तक सफलता। देता है। इस नाटक के लिये मैं बाबू श्यामसुन्दर दासजी को धन्यबाद देता हूं कि उन्होंने स्वयं इसका प्लाट लिखा, तथा पृथ्वीराज रासौ इत्यादि पुस्तकें देकर उत्साहित किया। पुस्तक कुछ और बड़ी थी पर प्रेस के अमुभीते तथा बिलम्ब होनेके कारण पहिला संस्करण मुझे ऐसाही निकालना पड़ा दूसरे संस्करण में इस पुस्तक का रंग रूप बदल दिया जायगा और दृश्य (सीन) इत्यादिक भी बढ़ा दिये जायेंगे। मैं नागरी प्रचारिणी सभा को भी हृदय से धन्यबाद देता हूं कि उसने नाटक में कुछ अंशों के उद्धृत करने की आज्ञा दे दी इसमें कितनेही स्थानों में ज्यों की त्यों बातो रक्खीगई है। यह नाटक शीघ्रही नागरी नाटक मंडली तथा हिन्दूकालिज ड्रेमेटिकक्लब द्वारा अभिनीत होगा।

-हरीदास माणिक

प्रस्तावना।

नाटक का लिखना कोई साधारण काम नहीं है। जब तक कि नाटककार ने स्वयं नाट्य न किया हो, वह कदापि नाना प्रकार के अलंकारों का दिग्दर्शन नहीं करा सकता। नाटककार जब स्वयं पात्र बनकर पार्ट करेगा तभी वह सच्चा नाटककार हो सकता है। हमारे माणिक महाशय भी उन्हीं नाटककारों में से हैं जिन्होंने स्वयं पार्ट कर बड़े २ राजे महाराजाओं तक से प्रशंसा पाई है। हरिश्चन्द्र में शैब्याका, राना प्रताप वा मेवाड़-मुकुट में बीरसिंह और अफीमची का, पाण्डव प्रताप में ढोलक शास्त्री का, कलियुग में राय बहादुर घसीटासिंह तथा संसार स्वप्न में बेटा दीना का पार्ट जिस खूबी से किया था उससे मैं ही नहीं वरन बनारस के जो २ रईस खेल देखने आयेथे सभी प्रसन्न हुए थे। कई एक ने रुपये तथा घिन्नी तक फेंके थे। आपने बड़े ही उद्योग तथा परिश्रम से काशी में नागरी नाटक मंडली की स्थापना की, और उसके लिये अब भी बहुत कुछ उद्योग करते रहते हैं। इन्होंने हिन्दूकालिज में स्वयं मुझसे भी हमारे गुरुदेव पं० विष्णुदिगम्बरजी के गायन सिस्टम को सीखा है। इसलिये नाटक में गायन भी अच्छे २ दिये गये हैं। इनके नाटक लिखने की शैली अपूर्व और अति उत्तम है। मुख्य कर ऐतिहासिक नाटकों के लिखने में ये बड़े प्रवीण और सिद्धहस्त हैं। ईश्वर करै यह सदैव इसी प्रकार अपनी मातृभाषा हिन्दी की सेवा में तत्पर रहैं।

(ह०) हरिकृष्ण हरिहरलेकर

प्रोफेसर-आफ म्यूझिक-सेन्ट्रलहिन्दूकालिज—काशी।

नाटक के पात्र।

पुरुष—

पृथ्वीराज—दिल्ली का राजा और नाटक का नायक
कन्हकाका— पृथ्वीराज का मामा,
चन्दबरदाई—पृथ्वीराज का राजकवि,
सलषप्रमार, निड्डुरराय, गुरुराम, पहाड़राय, जैतप्रमार, गोयन्दराय ,नरनाहकन्ह, पज्जुन राय, हाहुलीराय, चन्दपुण्डीर, देवराजबग्गरी, अल्हनकुमार, सारंगराय, अचलेश राय,
ब्राह्मण—मदनिका का पति,
त्रिम्बक—पृथ्वीराज का सखा,
जंगम और सूफी कन्नौज के निवासी,
जयचन्द—कन्नौज का राजा,
रावण और सुमन्त—जयचन्द के मंत्री
हेजमकुमार—जयचन्द का राजकुमार,
कमधुज—जयचन्द का सेनापति,

स्त्री

संयोगता—जयचन्द की लड़की नाटक की नायिका।
मदनिका— संयोगता की गुरुवानी।
रानी जुन्हाई—जयचन्द की रानी,
सरला, कुमारियां, दूती, संयोगता की सहचारियां इ०
इच्छनीकुमारी—पृथ्वीराज की रानी,
कर्नाटकी—पृथ्वीराज द्वारा निर्वासित सहचरी
भाट सखी, सहेली, दूत चोबदार, सेनापति, सैनिक, इ०

ओ३म्

संयोगता-हरण

प्रस्तावना।

दृश्य—एक साधारण कमरा।

सूत्रधार—(एक थाल में फूल लिये हुए पारिपार्श्वक सहित सूत्रधार ईश्वर की वन्दना करता हुआ दिखाई पड़ता है,)

(राग विहारी—ताल तिताला)

जय जगदीश हरै॥ टेक॥
दीन जनन कर संकट छन में दूर करै॥१॥
जो ध्यावे वाही नित भवसागरहिं तरै॥
माणिकमणि धनधाम आदिसौं, नेकु न कामसरै॥

अहा! देखो संसार में एक चिन्तित व्यक्ति की भी कैसी दशा रहती है। इसका अनुभव आज हमें हुआ है। संयोगता-हरण नाटक ने कुछ ऐसा प्रभाव जमा लिया है, कि जगदीश्वर की स्तुति तथा वन्दना में भी कुछ न कुछ विघ्न पड़ही गया। (आकाश की ओर देखकर) प्रभो! मुझसे यह भूल हुई है इसे क्षमा करना। संसार में प्राणिमात्र से भूल हो ही जाता है। मैंने कितना ही प्रयत्न किया कि आपकी वन्दना में कुछ भी कोर कसर न हो पर मैं कर ही क्या—सकता था यह तो मेरी शक्ति के बाहर था। क्यों न हो इसका प्लाट भी तो एक हिन्दी के भारी विद्वान का लिखाथा हुआ है।

[साकी जोगिया—ताल तिताला]

जानत को नहिं श्यामसुन्दर, दासहिं भारत माहीं।
जिन हिन्दीं हित सर्वस दीन्हीं, तन मन धनहिं सदाहीं॥
कियो भारी उपकार—भयो घर घर हिन्दी परचार।

अस्तु प्रभो! मैं फिर बारम्बार तुमको नमस्कार करता हूं। (कुछ ठहर कर) अरे आज इस रंगशाला में ऐसी भीड़ क्यों? हमें तो ऐसा जान पड़ता है कि—

[साकी—जोगिया—ठेका—लावनी]

जिमि नृप देखन सुघर स्वयम्बर, संयोगता कर आये।
तिमि नागरि नाटक मंडप महँ, आजु विज्ञगण धाये॥
हैं सब गुण ग्राहक विद्वान—करैं नित नाटक कर सन्मान।

अहा! यह अच्छा अवसर हाथ लगा है, फिर इन लोगों को आज यही नाटक दिखलाया जाय। पर इसके विषय में गृहिणी से भी सम्मति ले लेनी चाहिए (एक ओर देखकर) अरे यह क्या यह तो आज कुछ पढ़ती हुई प्राणप्यारी इधरही आ रही है। अच्छा (एक ओर खड़े होकर) देखें क्या पढ़ती है।

(नटी का संयोगताहरण-नाटक लिये हुए प्रवेश)

नटी—(पढ़ती है) पर प्राणनाथ तुम्हारे सो सामन्त हमारे पिता की सेना के आगे कब तक ठहर सकेंगे।

सूत्रधार—(आगेआकर) भला तुमने आज कौनसा प्रसंग उठा रखा है। यह कौनसा नाटक देख रही हो (पुस्तक देखकर) अहा! क्या संयोग है। प्यारी! अभी इसपर

मैं विचारही कर रहा था कि ऐसे समय आप स्वयं आ गई। अस्तु आज उपस्थित सज्जनों को यही नाटक दिखाने की इच्छा है।

नटी—मैं भी तो यही पूछने वाली थी सो स्वयं आपने अपनी सम्मति दे दी, प्राणनाथ इस नाटक में करुणा वीर रौद्र तथा हास्य रस को भली भाँति झलकाया है, और फिर पृथ्वीराज और संयोगता के भागने के समय की बात चीत तो मन को मोहे लेती है।

नट—भला वह क्या है—

नटी—सुनो न—संयोगता पृथ्वीराज से कहती है कि—

सुनो प्राणप्यारे मेरे, पितु की सेन अपार।
नहिं पावैं सामन्त सौ, सेना लाख हजार॥

नट—अहा क्याही सुन्दर उक्ति है-हां फिर—

नटी—फिर पृथ्वीराज के हठ पर संयोगता कहती है कि-आर्यपुत्र मेरे पिता का दल बल बड़ा है। जब उनकी सारी सेना सजती है तब पृथ्वी उथ-पथल होने लगती है। घोड़ों की टाप से उठी हुई धूलि आकाश में इस तरह से आच्छादित हो जाती है ; मानों स्वयं सूर्य भगवान ने शंकित होकर उपर से छाता तान दिया हो। नदी नालों में कीच निकल आती है, पहाड़ राई हो धूल में मिल जाते हैं, फनीस फूष फूष कर फन फटकारने लगता है।

नट—वाह क्या कहा है, बलिहारी प्रिये बलिहारी। अस्तु फिर सब लोगों से प्रार्थना कर पात्रों को सजावें क्योंकि नाटक का नाम सुनकर दर्शक गण भी मन ही मन अकुलाते होंगे—इस लिये सबसे यही प्रार्थना है कि—

(साकी जोगिया—ताल कव्वाली)

माणिक कविकर नव रचना यह, हिन्दी नाटक माहीं।
तजि अवगुण गहि गुणहिं वस्तु कर, सज्जन लेहिं सराहीं॥
विन्ती सबसौं करौं पुकार—करो अब नाटयकला परचार।

(नेपथ्य में)

अरे क्या अभी तक कुमारियां विनय मंगल पाठ के लिये नहीं आईं—?

नट—अरे यह क्या तुमने तो सब पहलेही से ठीक कर रखा है—वह देखो तुम्हारी माता तो मदनिका ब्राह्मणी बन कर आ पहुंची। और फिर दूसरी ओर तो देखो तुम्हारा भाई जयचन्द बन कर स्वयंवर के मण्डप को ठीक बनाने की आज्ञा दे रहा है—

नटी—मैं तो जानती ही थी कि आज यही नाटक प्राणनाथ से विन्ती कर करूंगी। अच्छा चलिये हम लोग भी अपना रंग रूप बदलें।

नट—हां हां चलो—(दोनों का प्रस्थान)

ओ३म्

संयोगता-हरण

पहिला अङ्क ।

पहिला दृश्य ।

स्थान—मदनिका ब्राह्मणी का कुञ्ज । काल—प्रभातकाल ।

(मदनिका ब्राह्मणी कन्यावों को शिक्षा देने की योजना कर रही है)

मदनिका—अभी तक कुमारियां विनय मंगल पाठ के लिये नहीं आईं ? इसका क्या कारण है ? (सरला से) सरले ! शीघ्रही सब कुमारियों को पाठ के लिये भेजो ।

सरला—जो आज्ञा गुरुवानी जी (चलने को तत्पर होती है) अहा ! वह देखिये सब कुमारियां इसी ओर आरही हैं । (सब आती हैं)

मदनिका—देखो कुमारियों तुम लोगों को इस प्रकार विलम्ब नहीं करना चाहिए ।

सबकुमारियां—नहीं गुरुवानी जी उपवन में पुष्प के लिये विलम्ब हो गया ।

मदनिका—अच्छा जो कुछ हुआ सो हुआ पर अब बैठकर विनय मङ्गल पाठ को ध्यान देकर सुनो। इस संसार में प्राणिमात्र विनय से सब कुछ कर सकता है। विनय द्वारा ही योगीश्वर ईश्वर से मुक्ति पाते हैं, विनय से देवता लोग वर देते हैं, विनय से गुरू विद्या पढ़ाता है, विनय से स्वामी सेवक पर प्रसन्न रहता है। विनय से कंजूस भी दाता बन जाता है और इसी विनय के कारण कन्त कामिनी के हृदय का हार होता है।

पहिली कुमारी—"गुरुवानी जी संसार में मान के साथ रहना चाहिये, क्योंकि मानहीन जीवन वृथा।"

मदनिका—बेटी! यह ठीक है पर उसका भी प्रयोग है। देखो किसी समय दो बहिनें थी। एक बड़ी विनय शीला और दूसरी मानिनी थी, विनय शीला का तो सारा जन्म सुख से बीता और मानिनी ने बहुत दुख उठाये। हे बेटी! जीवन में विनय घर दीपक के समान है। जिस प्रकार दीपक बिना घर, प्राण बिना देह, प्रतिमा बिना देवालय, कन्त बिना कामिनी, लज्जा बिना राजपूत जाति का जीवन सूना है, उसी प्रकार विनय के बिना स्त्री का जन्म वृथा है, क्योंकि विनय हीन स्त्री का स्वामी उससे सदा अप्रसन्न रहता है और नाना प्रकार का दुख देता है इस लिये हे कुमारी! इस विनय मङ्गल मर्म को समझ कर इसके अनुसार आचरण करने की चेष्टा कर।

संयोगता—पर यदि स्वामी वृथा ही पत्नी को दुःख दे तब क्या करे ?

मदनिका—हे कुमारी ! उसे सुधारने का प्रयत्न करे, और वह विनय ही से सुधर भी सकता है । जिस कुमारी ने अपने पति को न सुधारा तब वह संसार में भला क्या काम कर सकती है ? विनय शील पुरुष से आबाल वृद्ध सब प्रसन्न रहते हैं, इस लिये जिस में जितना विनय का अंश विशेष होगा, वह उतना ही लोक प्रिय होगा । विनय बिना वैराग्य या भक्ति किसी की भी साधना नहीं हो सकती। विनयहीन मनुष्य का जीवन ऐसा ही है जैसे प्रत्यंचा बिना धनुष ।

दूसरी कुमारी—गुरुवानी जी यदि अपराध क्षमा हो तो एक बात कहूं ?

मदनिका—हां हां, कहो । जो २ सन्देह हो यहीं पर दूर करलो । तुम निर्भय होकर जो पूछना चाहो पूछो ।

दूसरी कुमारी—पर मानिनी राधा "मानिनी राधा" करके क्यों प्रसिद्ध हैं ।

मदनिका—हां ध्यान देकर सुनो न तो कृष्ण ऐसा पति ही सब को मिलता है और न राधा ऐसी सब स्त्रियां चतुर ही होती हैं । वह मानिनी थी पर समय २ पर विनय शीला भी बनकर काम निकालती थी । हे राजकुमारी ! मान करना बुरा है । मान से परस्पर का स्नेह भङ्ग हो जाता है, दुःजन

भी दुर्जन से दीख पड़ने लगते हैं और जुड़ा हुआ नाता टूट जाता है। मान से आत्मिक गुणों का ह्रास होता है इस लिये मान, इस जीवन में मदिरा के समान मन्द माना गया है। मानही जीवन के दुःखों का मूल है। हे कुमारी! तू मान को त्याग कर शील सम्पन्न स्वभाव वाली सुशीला बन। जिस प्रकार क्षण मात्र पाला पड़ने से बड़े २ गहवर बन एक दम मुरझा जाते हैं उसी प्रकार विनय के आग्रह से मान जनित असङ्ग मूलक विषय नष्ट हो जाते हैं।

संयोगता—पति पत्नी दोनों मिलकर तब एक शरीर होते हैं फिर ये दोनों किस प्रकार वास्तविक में एकही रहते हैं।

मदनिका—विनय द्वारा जिसे तू अपने को आप अपना देगी वह फिर आपही तेरा हो रहैगा। इस प्रकार हे संयोगता विनय द्वारा दो तन एक प्राण किये जा सकते हैं।

तीसरी कुमारी—हे गुरुवानी जी विनय के क्या लक्षण हैं। कृपाकर भलीभांति बताइये।

मदनिका—विनय के यही लक्षण हैं कि जिस से पति वश हो। स्त्री पति से दृष्टि न मिलावे। विषय सुख का त्याग करै और जिस से परमात्मा भी वशीभूत हो वही विनय है। इस विनय के कारण कुमारियों का प्रताप दूज के चन्द्रमा की भांति दिन दूना रात चौगुना बढ़ता है।

संयोगता—हे पाठिके ! कन्त किस प्रकार वश किया जासकता है ?

मदनिका—हे बाले ! विनय से पति बात की बात में वशीभूत हो जाता है । ज्यों ज्यों विनय अभ्यास बढ़ता जायगा त्यों त्यों दाम्पत्य सुख भी बढ़ता जायगा । हे सुन्दरी ! विनय के बिना एक स्त्री जाति क्या, संसार में किसी को भी सुख नहीं प्राप्त हो सकता है । यदि मन्त्र भी न मालूम हो तो विनय से वश किया जा सकता है । विनय से सुयश मिलता है । विनय से सुख और भोग रस मिलते हैं । विनय ही रसखानि और विनय शील आचरण अमृत के समान हैं । यदि पति मान मय हो और स्त्री आधी रात के समय विनय पूर्वक विनती करे तो अवश्य है कि वह मानी पति मान को त्याग कर स्त्री के हिये का हार बन जावे । हे सहज सुन्दरी संयोगता ! इस विनय मङ्गल पाठ को गांठ में बांध रखो, इससे तुम्हे जीवन के सब सुख सहज ही प्राप्त होंगे ।

(मदनिका के बूढ़े पति ब्राह्मण का प्रवेश)

ब्राह्मण—पण्डितानी जी ! क्या मङ्गल पाठ अभी तक हो रहा है ? ठीक है जब तक गुरु शिष्य को अपने से भी बड़ा न बनावे तब तक गुरुआई क्या ? जान पड़ता है कि संयोगता पर आपकी विशेष कृपा है ।

मदनिका—इस में क्या सन्देह पर विशेष कृपा का होना तब सफल हो जब इसे सुन्दर और शूरवीर पति मिले ।

आस्था—इसके योग्य तो सम्भरी नाथ पृथ्वीराज ही हैं ।

संयोगता—(मदनिका से) भला यह पृथ्वीराज कौन है ? क्यों गुरुवानी जी क्यों तुम इनका गुण वर्णन कर सकती हो ।

मदनिका—हां हां, सुनो मैं सब सुनाती हूं । गुणवर्णन के साथही साथ इतिहास का भी पाठ हो जायगा । "दिल्ली में अनङ्गपाल नामक तोमर वंशीय राजा राज्य करता था । जब उसकी अवस्था ७७ वर्षकी हुई तो उसने, वैराग्य उत्पन्न होने के कारण अपना राज पाट अपने दौहित्र, अजमेर के राजा को दे दिया और आप तपस्या करने के लिये बदरिकाश्रम को चला गया । यद्यपि पृथ्वीराज को गोद लेते समय अनङ्ग-पाल को उसके मंत्रियों ने अपना सा समझाया बुझाया और मना किया परन्तु उसने एक न माना, अन्त में परिणाम यह हुआ कि पृथ्वीराज दिल्ली राज्य के सिंहासन पर बैठ कर अपना पराया करके शासन करने लगा जिससे दिल्ली की प्रजा का दिल दुःख गया और सब प्रतिष्ठित प्रजा ने अनङ्गपाल के पास जा पुकारा; यह सुनकर अनङ्गपाल स्वयं दिल्ली को आया, इससे पृथ्वीराज बड़े अतिथी से मिला । अनङ्गपा-ल ने दिल्ली में कुछ दिन मिहमान की भांति रहकर पुनः बदरिकाश्रम का रास्ता लिया और यहां पृथ्वीराज इस समय

पृथ्वीतल के राजाओं में अद्वितीय बलशाली और सुकीर्तिमान पुरुष है। इस समय पृथ्वी पर उसका यश शरद ऋतु का सा चटक चांदनी फैला रहा है।

ब्राह्मण—हां मैंने भी इस प्रतापी राजा की बड़ी प्रशंसा सुनी है। वह बड़ाही शूरवीर है। क्षत्रियों के सब गुण उस में वर्तमान हैं।

मदनिका—अच्छा अब विशेष प्रशंसा की आवश्यकता नहीं। आज पाठ भी बहुत देर तक हुआ है और ऊपर से आपने भी गुण वर्णन में कुछ समय ले लिया। अस्तु अब कुटी के पिछले भाग पर भी चलकर कुमारियों को देखना है।

ब्राह्मण—हां हां शीघ्र चलो (संयोगता से) संयोगता तुम यहीं पाठ करो हमलोग टुक पर्णशाला की ओर जाते हैं।

(दोनों का प्रस्थान)

संयोगता—पृथ्वीराज की लोग बड़ी प्रशंसा करते हैं। जान पड़ता है, यह राजा वास्तविक में शूरवीर है, क्योंकि दरबार में भी इनका वर्णन होता था।

पहिली कुमारी—देखो संयोगता शूरवीर के पाले पड़कर हमें भी न विसरा देना?

दूसरी कुमारी—अजी विवाह के बाद कौन किसको पूछता है। (संयोगता से) क्यों संयोगता ठीक है न?

तीसरी कुमारी—ठीक है विवाह के बाद यह अपने प्राण

पति के साथ नौ दो ग्यारह होंगी कि हम लोगों की सुधि लेंगी। (संयोगता से) क्यों संयोगता ?

संयोगता—देखो यदि तुम लोग हमें विशेष दिक करोगी तो मैं चली जाऊंगी। मुझे ऐसी हंसी नहीं पसन्द आती।

पहिली—मन में भावे मुड़ी हिलावे। दिल में तो हंसी अच्छी मालूम पड़ती होगी और ऊपर से नाहीं नुकुर कर रही हैं।

संयोगता—लो मैं जाती हूं। तुम लोग इसी प्रकार मुझे बनाने का प्रयत्न करती हो।

(संयोगता जाने को तत्पर होती है और सब सखियां नहीं जाने देतीं)

पहिली—अच्छा हमारी चूक क्षमा करो, भूल हुई।

संयोगता—अजी तुम इसी तरह भूल किया करती हो।

दूसरी—अच्छा अब इन सब पचड़ों को दूर करो। (एक ओर देखकर) अहा ! तुम उस झरने पर तो दृष्टि डालो कैसा मनोहर शब्द होरहा है। इस समय तो कुछ गाना बजाना ही उपयुक्त होगा।

तीसरी—हां हां, यह तुमने अच्छा विचारा—राजकुमारी का भी चित्त गान से प्रसन्न हो जायगा। और यह समझ भी जायंगी। (सब गाती हैं)

(राग खमाज–ताल तिताला)

अहा मधुर जल शब्द सुहावन ॥ टेक ॥
सरिता बनि पुनीत सागर-हिय, करै सुखद मन भावन ॥
तिमि तुम आर्द्र करोगी प्यारी, कोउ कुमार-कुल-पावन ।
पिय हिय हार होहि जब जइहौ, तब बिछोह तरसावन ॥

(बूढ़े ब्राह्मण का पुनः प्रवेश)

ब्राह्मण—(स्वगत) इन सभों की मुख्यानी तो आश्रम के दूसरी ओर गई हैं यह अच्छा अवसर है कि पृथ्वीराज की प्रशंसा कर मैं इसका चित्त उसकी ओर प्रवृत्ति करूं (प्रकाश)—

या भारत की भूमि महँ, को पृथिराज समान।
नाम सुनत सत्रुन भगैं, जो सब गुन कर खान॥

अहा! धन्य है पृथ्वीराज को जो इस समय भारतवर्ष के सब राजावों में श्रेष्ठ हैं।

संयोगता-बूढ़े बाबा तुम किसका गुणगान कर रहे हो?

ब्राह्मण—अनङ्गपाल के राज्य का उत्तराधिकारी सम्भरीनाथ पृथ्वीराज चौहान का गुण गान कर रहा हूं।

संयोगता—भला उसमें कौन २ से गुण हैं क्या तुम मुझे बतला सकते हो?

ब्राह्मण—हां हां ध्यान देकर सुनो—क्या कहूं पृथ्वि-

राज, पृथ्वीराज ही है। उसके एक एक गुण में सादृश्य पाने योग्य बहुत से राजा हो गये हैं, परन्तु सर्वथा उसकी समानता का न तो कोई हुआ है और न होगा। वह राजाओं में विक्रम के समान, सत्त में राम के समान, बाहुबल में सहस्त्राबाहु के समान; चन्द्रमा के समान शीतल हरिश्चन्द्र के समान सत्य व्रतधारी और युद्ध कौशल में भीष्म के समान है; वह दैत्यवंशीय वीर इस भूतल पर इन्द्र के समान उपमान पाने योग्य है। कहने का तात्पर्य यह है कि मैं उसके गुणों की किससे उपमा दूं। अच्छा अब मुझे विलम्ब हो रहा है, मैं अब जाता हूं। (प्रस्थान)

संयोगता—संयोगता तू भाग्यवान होगी यदि ऐसा वर प्राप्त किया, पर अच्छे कार्यों के लिये कठिन तपस्या और परिश्रम करने की आवश्यकता है। कुछ चिन्ता नहीं, जिस प्रकार सीता ने राम के लिये, दमयन्ती ने नल के लिये, पार्वती ने शिव के लिये, रुक्मिणी ने कृष्ण के लिये एवं जिस प्रकार काली ने वीरवाहन के लिये ध्रुवव्रत धारण किया था उसी प्रकार पृथ्वीराज को प्राणपति बनाने के लिये यह संयोगता ध्रुवव्रत धारण करेगी (प्रस्थान)

दूसरा दृश्य ।

स्थान—साधारण कमरा, काल—प्रभात—

(जयचन्द अपने मन्त्री से यज्ञ विषयक बात चीत कर रहे हैं)

जयचन्द—मन्त्रिवर ! अब यज्ञ का काम सम्हालना तुम्हारे ही हाथ है; देखो इस काम में किसी प्रकार की त्रुटि न हो ।

मन्त्री—धर्मावतार ! मैं अपने भरसक तो सब ठीक करूंगा अब कार्य का बनना न बनना परमात्मा के हाथ है ।

चोबदार—अन्नदाता जी ! देश विदेश से दूत आ गये ।

जयचन्द—हां हां उन्हें शीघ्रही यहां आने दो ।(मन्त्री से) मन्त्रिवर ! देखें ये क्या संदेशा लाते हैं ।

(दूतों का प्रवेश)

दूतगण—अन्नदाता जी ! क्या भारतवासी क्या विदेशी हिन्दू मुसलमान सब ने आप की अधीनता स्वीकार करली । सब ने आपको कर देना स्वीकार कर लिया है ।

जयचन्द—बस फिर क्या, मन्त्रिवर ! अब तो लोक लज्जा रही । सुमन्त अब ऐसा प्रबन्ध करो जिस में मेरी कीर्ति किसी प्रकार कलंकित न हो सके । मैंने मन्त्र बल से आकाश और पाताल के देवतावों को जीता है, और साहस से दशों दिशावों के दिग्पालों को । इस समय पृथ्वी पर के

सब शासक मेरा महत्व स्वीकार करते हैं, इसलिये यह यज्ञ करना मेरा कर्तव्य है, क्योंकि संसार में काल बली है दृष्ट अदृष्ट सब पदार्थ एक न एक दिन काल कवलित होते हैं, केवल कीर्ति पर काल का पञ्जा नहीं पड़ता। जो मनुष्य काल को छल कर कर्तव्य पालन कर लेते हैं उन्हीं का नाम संसार में अमर होता है।

सुमन्त—ठीक है महाराज! पर यह कार्य बड़ा ही विकट है। जबतक समस्त नरेश वशीभूत न होलें, इसका करना वृथा है

जयचन्द—सब जगह का वृत्तान्त तो तुमने दूतों द्वारा सुनाही अब रहा केवल पृथ्वीराज, सो भी मेरे आंतक में आही जायगा! हे सुमन्त! मेरे पिता ने समस्त देशपर विजय प्राप्त करके दिग्विजयी पद प्राप्त किया था! इसलिये आज समस्त राजाओं में समर्थ मेरे मौसेरे भाई पृथ्वीराज के पास दूत भेज कर कहला भेजो कि वह दिल्ली से लगाकर सोरां तक कि भूमि मुझे दे दे। यदि पृथ्वीराज पूछें कि जयचन्द ऐसा क्यों करते हैं तो कहना कि यद्यपि मातृपक्ष के विचार से हम दोनों भाई बराबर हैं परन्तु कमधुज्ज का राज्य अनादि है। चौहानों की आदि राजधानी संभर है इस लिये तुम अजमेर में राज्य करते रहो, परन्तु हमारी सर्वभौम राजसत्ता के विचार से, और भाई चारे के हिसाब से दिल्ली की आधी भूमि हमें दे दो।

सुमन्त—महाराज मेरी सम्मति में तो इस समय यज्ञ न करना चाहिये ।

जयचन्द—मन्त्रिवर! तुम विचारशील मन्त्री होकर भी इस प्रकार की बातें क्यों करते हो । (भाटों की ओर देखकर) क्या तुमने हमारी विरुदावली इन कवियों के मुख से नहीं सुनी है ?

भाट—हां महाराज भला आपकी समता कौन कर सकता है। सुनिये अपने पुरुषों की कीर्ति सुनिये—

तुववंश भये कमधज्ज सूर ।
कीनी सुराज राज्जस भूर ॥
तव बंश भयो बाहन नरिंद ।
अन्तरिष रथ्थ चलि अग्गछन्द ॥
तुव बंश भयो पुरुष्ष रूर ।
रथचधारि चक्र जिहिजी तिसूर ॥
सतसिन्धु सूर जिह रथ्थ चिल्ह ।
तुव बंश भयोनृप राव नील ॥
तुव बंश भयो नलराहं अन्द ।
नैवद्ध हार हो धर्यो बंध ॥
षट चक्र भए कमधज्ज आदि ।
किन्नों नरिन्द जिह बरुन वाद ॥
जीमूत धस्यो जिहि चक्र सीस ।
संसार किति कीनी अगीस ॥

को कहै पङ्ग सों दुष्ट आय ।
मरद्दै भुजङ्ग निहचत राय ॥
आरम्भ भूमि हयगय अनग्ग ।
परठन्त पुन्न राजसू जग्ग ॥
सोधिग पुरान बलि बंस बीर ।
भूगोल लिखित दिष्षिल सहीर ॥
छिति छत्र बंश राजन समान ।
धितेति सफल हयगय प्रमान ॥

धर्मावतार ! जब ऐसे २ लोग आपके पूर्व पुरुषों में हुए हैं फिर आप क्यों संकुचित हो रहे हैं।

जयचन्द—मंत्रिवर ! अब तो यज्ञ करनाही ठीक है इस लिये यज्ञ की सब सामग्री प्रस्तुत करो।

सुमन्त-महाराज मेरी विन्ती पर ध्यान दीजिये। न अब वह समय है और न अब अर्जुन भीम के समान बलवान और प्रतापी पुरुष हैं। कलयुग में यज्ञ नहीं हो सकता।

जयचन्द—मंत्री ! तुम बे समझी की बातें न करो। अब मैं जो कहता हूं उसके करने का बन्दोबस्त करो।

सुमन्त—महाराज ! आप जो कहिये सो करूंगा पर काम सोच विचार कर करना चाहिये।

जयचन्द—सोचना विचारना यही है कि तुमको पृथ्वीराज का डर है पर इसकी तुम कुछ भी चिन्ता न

करो । तुम पृथ्वीराज के पास जावो और मेरा यज्ञ सम्बन्धी संदेशा कहो ।

सुमन्त—महाराज ! इस में मुझे कोई आपत्ति नहीं है पर कार्य में फलीभूत होना कठिन ही है । अच्छा अब मैं जाता हूं परमात्मा करै मैं श्रीमान के कार्य में कृतकार्य होऊं । (प्रस्थान)

जयचन्द—कवियों तुम लोग चलो और यज्ञ सम्बन्धी बातें ठीक करो ।

भाट—जो आज्ञा महाराज ! (प्रस्थान)

जयचन्द—मन्त्री सुमन्त न जानें क्यों इतना डरता है । मैं राजसूय यज्ञ अवश्य करूंगा—यदि इस कार्य में कृतकार्य हुआ तब तो फिर कहनाही क्या; एक बार फिर भारत में राम और युधिष्ठिर की नाईं सम्राट् पदग्रहण करूंगा ।

(नेपथ्य में शंखध्वनि)

जान पड़ता है दरबार का समय हो गया है । अच्छा फिर शीघ्रही चलना चाहिये । (प्रस्थान)

तीसरा दृश्य ।

स्थान—खोखन्दपुर का एक भाग; काल—दोपहर

(त्रिम्बक कुछ सोच करते हुए दिखाई पड़ता है)

त्रिम्बक—इस राजा के पीछे तो हमारी भी बड़ी दुर्गति हो रही है। आज यहां कल वहां, परसों जङ्गल में तो नरसों कील कांटो से सनद्ध हो लोहा भी सङ्ग सङ्ग बजाने जाना पड़ता है, यद्यपि अपने शठ इन सब बातों से अनभिज्ञ नहीं हैं पर तिसपर भी जब किसी अच्छे से पाला पड़ जाता है तो बुद्धि चकराने लगती है। जङ्गल में हमारे राजा साहब तो मङ्गल मचाते हैं, पर यहां तो सोलहो डण्ड एकादशी रहती है। सोलहो डण्ड की बात तो दूर रही पर कभी२ दैवात् बड़े२ दांत वाले भालू भी मिल जाया करते हैं, फिर तो हमारी उस समय जो दुर्गति होती है वह तो हमी जानते हैं। (कुछ सोचकर) किसी ने सत्यही कहा है "जाके पैर न फटी बेवाई ऊ का जाने पीर पराई" किसी प्रकार झाड़ी में छिप छाप कर अपना प्राण बचाते हैं। (इधर उधर देखकर) अच्छा अब इन सब पचड़ों का रोना रोने से क्या होगा। चलें खोखन्दपुर का जो कुछ विवरण हो सब पृथ्वीराज से कहें क्योंकि पज्जूनराय, पहाड़राय, नरसिंह दाहिमा, इत्यादि सामन्तगण घेरा डालने के लिये तैयारी कर रहे होंगे।

(कन्हकाका का प्रवेश)

कन्हकाका—कहो मित्रवर! आज इतने उदास क्यों हो? जान पड़ता है कि पृथ्वीराज से गनेश थोपड़ी खेलते समय गहिरी चपत लगी है।

त्रिम्बक—हां महाराज! यही तो बड़ा आश्चर्य है कि लोग अपने ही सिर पर अपने ही हाथों से चपत लगाकर पूछते हैं कि चपत किसने लगाई?

कन्हकाका—(स्वगत) यह त्रिम्बक अवश्यही कुछ हास्य ही हास्य में उपदेश दे रहा है (प्रकाश) मित्रवर! इस का क्या अर्थ?

त्रिम्बक—इसका अर्थ यही है कि जिस प्रकार गनेश थोपड़ी वाला चोर स्वयं अपने सिरपर चपत लगाकर अपने को चोर नहीं बताता उसी प्रकार हमारे श्रीमान को जानो।

कन्हकाका—वह क्या?

त्रिम्बक—यही कि वह इस बात को जानकर भी अनजाने से हो रहे हैं। जयचन्द की कन्या तो हाथ लग सकती ही नहीं फिर व्यर्थ का बैठे बिठाये अपने ऊपर बोझ लेना यह कहां की बुद्धिमानी है। इसमें अपने ही वीरों के संहार के अतिरिक्त और क्या है। देखिये इसी खोखन्दपुर के नाश करने में कितने वीर कट मरेंगे, फिर अपने ही ऊपर यह चपत न लगी तो और क्या है?

(चन्दवरदाई का प्रवेश)

चन्दवरदाई—कहो त्रिम्बक जी ! आज किसके ऊपर चपत पड़ रही है ?

त्रिम्बक—कुछ नहीं वरदाई जी ! योंहीं कुछ काका जी से बातें हो रही थी।

चन्दवरदाई—भला कुछ मुझे भी बतावो ?

त्रिम्बक—वह तुम्हारे बताने योग्य नहीं है।

चन्दवरदाई—क्यों ?

त्रिम्बक—इसीलिये कि जो प्रत्यक्ष देख रहा है कि उसका मित्र गढ्ढे में गिर रहा है और फिर उसे न बचावे।

चन्दवरदाई—(स्वगत) जान पड़ता है कि यह पृथ्वीराज के बारे में मुझे कुछ चेतावनी दे रहा है। (प्रकाश) मित्रवर ! कुछ चिन्ता की बात नहीं है, अभी तो उड़ती २ खबर है।

त्रिम्बक—अरे जब इस ऊड़ती खबर पर यह दशा है, तब पक्की खबर पर न जाने क्या हाल हो ?

कन्हकाका—नहीं मित्रवर ! इसके विषय में तुम अनभिज्ञ हो, कुछ संयोग्यता के लिये थोड़ेही खोखंदपुर आये हुए हैं वरन् जयचन्द को केवल दिक करने के लिये।

त्रिम्बक—तो फिर व्यर्थ का बैठे बिठाये झगड़ा लेना क्या बुद्धिमानों का काम है ? हमें तो ऐसा भाषता है कि

चौहान अवश्यही घर के बढ़ियां छोहारों को छोड़कर बनैली झमली पर दांत लगाने की इच्छा रखते हैं ।

चन्दवरदाई—इसका क्या अर्थ ?

त्रिम्बक—इसका अर्थ यही है कि रनिवास की सुन्दर सुन्दर सलोनी रानियों को छोड़कर जयचन्द की लड़की को वरना चाहते हैं ।

चन्दवरदाई-(स्वगत) यह त्रिम्बक सब पता रखता है। (प्रकाश) नहीं २ अभी यह खबर उड़ती २ है । चौहान के किसी दूत ने भी ऐसा कोई समाचार नहीं भेजा है कि पृथ्वीराज संयोगता के इच्छुक हैं ।

त्रिम्बक—नहीं सही भइया अपने शठ को इन बातों से क्या करना है । जो अपना धर्म था सो कहा और चौहान से भी यही कहैंगे ।

चन्दवरदाई—अच्छी बात है तो चलो फिर जहां पर श्रीमान् आखेट खेल रहे हैं वहीं पर चलें ।

त्रिम्बक—वहां चलने में तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है पर एक बात का भय है ।

चन्द०—वह क्या ?

त्रिम्बक—वह यही कि कोई बूढ़ा रीछ न आकर दबोच बैठे। नहीं तो वे माई बाप का बिचारा त्रिम्बक गया।

चन्दवरदाई-नहीं२ चलो घबड़ाओ मत।(दोनों का प्रस्थान)

चौथादृश्य ।

स्थान—जयचन्द का दरबार; काल-दो पहर का समय ।

(सामन्त और सरदारगणों से सभा भरी है, दूसरी ओर कोकिलकण्ठी गायिकायें मधुरस्वर से मंगल गीत गा रही हैं ।)

धन धन पंचराज महराज ॥ टेक ॥
तव प्रताप भारत मंह, जंह तंह गावहिं सकल समाज ।
नेकन राजा धावहिं तव हित, तजि तजि आपन काज ॥
सदा रहै यह राज अचल तव, अरु सद साज समाज ।
माणिक मणि धन धाम आदि सों, पूरित हो तव राज ॥

[गायिकायें गाकर चली जाती है, फिर जयचन्द समस्त दरबार को देखकर कहता है]

जयचन्द—मंत्रिवर! इसमें कुछभी सन्देह नहीं कि इस मण्डप के बनाने में कारीगरों को पूरी मेहनत पड़ी होगी । सुन्दर बन्दनवार तथा सोने के काम किये हुए मणिजटित खम्भों पर झलमलाते हुये मणि, मनको मोह रहे हैं ।

एकसामन्त—ठीक है धर्म्मावतार ! इस समय तो आप मानों मयदानव की सभा में साक्षात धर्म्मराज युधिष्ठिर से शोभित हो रहे हैं ।

जयचन्द—भला मैं किस योग्य हूं, पर हां यदि राजसूय यज्ञ कर पाया, तब मेरी अभिलाषा पूरी हो ।

(बालुकाराय की स्त्री का रोतेहुए प्रवेश)

स्त्री—महाराज ! मेरा सर्वनाश हो गया ।

जयचन्द—भला क्या हुआ कहो भी तो सही । जयचन्द के रहते किस की सामर्थ्य है जो उसकी प्रजा का एक बाल भी बांका कर सके ?

स्त्री—धर्मावतार ! मेरा जीवनाधार मारा गया ।

जयचन्द—तुम्हारा जीवनाधार कौन ?

मन्त्री—महाराज ! बालुकाराय ।

जयचन्द—अरे क्या बालुकाराय मारा गया ?

एक सैनिक—महाराज ! सरदार तो मारा गया पर पृथ्वीराज ने खोखन्दपुर को उजाड़ कर सर्वनाश कर दिया । वहां की प्रजा त्राहि २ कर रही है ।

जयचन्द—(आवेश से) पूर्वदिशा का देवता इन्द्र है, अग्निकोण का अग्नि, दक्षिण दिशा का यम और नैऋत्य का राक्षस है । पश्चिम दिशा का अधिपति वरुण और वायव्य कोण का वायु है ! उत्तर के कुवेर और ईशान के ईशान अर्थात् देवता हैं । आकाश में ब्रह्मा और पाताल में शेष हैं । अस्तु इनमें से पृथ्वीराज किसी की भी शरण जाय पर जीता नहीं बच सकता । हनुमान जी को जब द्रोणगिरि के उपारने पर गर्व हुआ तो भरत जी ने बाण मारकर उनके गर्व को गिरा दिया, यदि आज अपना दल

बल सजकर पृथ्वीराज को मय उसके सहायक समरसिंह सहित न बांधकर लाऊं तो मैं अपने पिता विजयपाल का जाया न कहाऊं। (मन्त्री से) मन्त्रिवर ! सेना सजी जाय मैं इसी समय जाकर पृथ्वीराज और समर सिंह दोनों को बांध लाकर तिल की तरह पेरूंगा तब मेरे जी में जी आयगा।

रानी जुन्हाई—महाराज ! पहिले संयोगता का स्वयम्बर कर लीजिये फिर पृथ्वीराज को पीछे पकड़ना। इस समय स्वयम्बर के लिये सब तरह सुपास है। देश देश के नरेश उपस्थित हैं। अस्तु बेटी का पाणिग्रहण कराके तब पृथ्वीराज को पकड़िये और फिर निश्चिन्त यज्ञ करिये।

जयचन्द—राजमहिषी ! तुम इन सब बातों को नहीं जानती हो। मैं पहिले क्षत्रिय को क्षत्रित्व दिखा लूंगा तब मुंह में ग्रास लूंगा पृथ्वीराज को इतना घमण्ड कि उसने खोखंदपुर में आकर रङ्ग में भङ्ग डाला है। अस्तु जो कुछ हुआ सो हुआ अब तो पृथ्वीराज का मान मर्दन करना ही पड़ैगा।

रानी जुन्हाई—मान मर्दन करने को कौन मना करता है पर समझ बूझ कर काम करना चाहिये। ऐसे उतावलेपन की क्या आवश्यकता है ?

जयचन्द—प्यारी ! उतावलापन नहीं, पृथ्वीराज को इतनी धृष्टता नहीं करनी चाहिये।

(गुप्तचरों का प्रवेश)

गुप्तचर—महाराज ! इस समय दिल्ली में केवल दस सामन्त छोड़कर पृथ्वीराज जङ्गल में शिकार खेल रहा है। असल बात तो यह है कि वह आपके डर से डरकर भागता फिरता है। इस समय फौज भेजकर उसे जङ्गल ही में घेर लिया जाय तो अच्छा हो।

जयचन्द—(हंसकर) सिंह के गुफा में हाथ डाल कर अपने बचने की आशा करना? अस्तु पृथ्वीराज जो कुछ तुमने किया सो किया अब उसका स्वाद चखते जावो। (रक्षक से) रक्षक! सेनापति कन्हकमधुज्ज को सभा में बुलावो?

रक्षक—जो आज्ञा महाराज! (प्रस्थान)

जयचन्द—पृथ्वीराज को इतना अहङ्कार होगया कि खोखन्दपुर में चढ़ाई कर बालुकाराय को मार डाला खैर जो किया सो किया।

(कन्हकमधुज्ज का प्रवेश)

कमधुज्ज—स्वामी! क्या आज्ञा है?

जयचन्द—आज्ञा क्या, पृथ्वीराज ने समस्त खोखन्दपुर को तहस नहस कर डाला है! इस समय वह जङ्गल में केवल थोड़े से सामन्तों के साथ २ शिकार खेल रहा है। अस्तु अब तुम अपने पराक्रम से उसे बन्दी कर लावो।

कमधुज्ज—जो आज्ञा अन्नदाता जी ! मैं अभी उसे बन्दी करता हूं और वह समय आयगा जब श्रीमान् उसको इसी सभा में सोने के जंजीरों से बंधा हुआ पायेंगे।

जयचन्द—यह सब तो कर लोगे पर साथ में तातार खां की कुमक सेना ले लेना।

कमधुज्ज—महाराज मैं कुल साठ हजार सेना लेकर उसपर धावा करूंगा पर पहिले सौदागरों के भेष में उसकी टोह लूंगा।

जयचन्द—यह तुम्हारी इच्छा पर है, पर स्मरण रहे कि मेरे प्यारे भाई बालुका राय का रक्त बहाने वाला यौंही न निकल भागे।

कमधुज्ज—नहीं धर्मावतार ! आप किसी बात की चिन्ता न करैं। मैं उसको उसकी धृष्टता का फल अवश्य ही चखाऊंगा। (प्रस्थान)

जयचन्द—इस सेनापति से मुझे पूरी आशा है कि यह अवश्य ही पृथ्वीराज को उसका प्रतिफल देगा।

(क्षणैक मौन होकर)

(इसी बीच में एक दूती का आना और रानी जुन्हाई के कानों में कुछ कहना)

पर पृथ्वीराज ने जो इतना साहस किया है वह भी किसी के सहारे पर। (सोचता है) किसी का सहारा

हो पर जयचन्द के आतङ्क का रोकने वाला भारत में कौन हुआ है ?

रानीजुन्हाई—महाराज! आप किस बिडम्बना में पड़े हैं। सामन्त और सेनापति लोग क्या सम्हालेंगे, न ?

जयचन्द--तुम्हें तो स्वयम्बर ही स्वयम्बर सूझा रहता है। अरे पहिले सिर पर शत्रु है उसका तो मुख मर्दन करलें फिर पीछे स्वयम्बर देखा जायगा।

रानी जुन्हाई—क्या आप को कुछ घर की भी खबर है कि रण ही रण में मग्न रहते हो। दूती द्वारा मुझे यह पता लगा है कि संयोगता पृथ्वीराज ही को, वर चुनना चाहती है। इसलिये उसकी अनुपस्थिति में स्वयम्बर होजाय तो अच्छा हो।

जयचन्द—(आवेश से) क्या यह बात सच है, यदि सच है तो मैं ऐसी कन्या का मुख देखना नहीं चाहता। (स्वगत) जान पड़ता है कि यह बातोंही बात में मुझसे स्वयम्बर जल्दी कराने के लिये भूमिका बांध रही है अथवा विमाता होने के कारण बात बना रही है।

रानी जुन्हाई—प्राणनाथ ! आप क्या सोच रहे हैं, मेरी बात को आप बनावट न समझिये यदि शङ्का हो तो समाधान कर लीजिये।

जयचन्द—प्यारी! मुझे तुम्हारे ऊपर पूरा विश्वास

है। समाधान करने की कोई आवश्यकता नहीं है, तुमने ऐसी सूचना देकर मेरा बड़ा उपकार किया। अस्तु फिर इसका क्या उपाय है जिससे वह अपने विचारों से पलट जाय।

रानी जुन्हाई—बस इसकी यही औषधि हैं कि उस चतुर दूती को भेजा जाय और वह साम दाम दण्ड भेद और अपनी कला तथा चातुरी एवं छल और बल से उसका चित्त फेरे।

रानी जुन्हाई—महाराज! मैं उसको अभी बुलाती हूं। (ताली बजाकर दूती का बुलाना)

दूती—स्वामिन्! क्या आज्ञा है?

रानी जुन्हाई—बस यही कि किसी प्रकार संयोगना का चित्त पृथ्वीराज से फेरो।

दूती—महारानी जी मैं अपने भर सक कुछ भी कोर कसर न रखूंगी।

रानी जुन्हाई—हां हां जावो मैं तुम्हे जानती हूं तुम अवश्य इस कार्य्य को कर लोगी। अच्छा अब तुम जावो और अपना कार्य करो।

दूती—जो आज्ञा महारानी जी! (प्रस्थान)

रानीजुन्हाई—महाराज यह दूती बड़ीही चालाक है। साम, दाम, दण्ड, भेद, तथा नीति के सब अङ्गों में दक्ष है।

जयचन्द—राजमहिषी ! मैं नहीं समझता कि पृथ्वीराज का भाव किस प्रकार संयोगता को हुआ।

रानी जुन्हाई—महाराज ! सदा यश कहीं छिपा रह सकता है ? किसी ने उसकी विरदावली तथा यश बखान दिया होगा।

जयचन्द—अस्तु जो कुछ हुआ सो हुआ अब आगे की सुधि लेनी चाहिये। (दूत का प्रवेश)

दूत—महाराज ! कमधुज्ज की पहिली कुमक ने पृथ्वीराज पर आक्रमण किया पर उसको पीछे हटना पड़ा। वाजिद खां मारा गया। फिर दूसरी तीसरी तथा चौथी अनी ने धावा किया। इस बार सैनिक तो कुछ तितर वितर हुए पर सामन्तमण्डली ने पीछा न छोड़ा।

जयचन्द—(घबड़ाकर) हां हां फिर।

दूत—फिर महाराज ! पज्जूनराय पहाड़ राय, नरसिंह दाहिमा तथा कैमास और रामराय ने बड़ी वीरता से पृथ्वीराज को बचाया और आपकी सेना को परास्त किया।

जयचन्द—(क्रोध से) मन्त्रिवर ! पहिले विषम विष के मूल का ही नाश करना उचित है। कहा है 'न रहे बांस न बजे बांसुरी।'

मन्त्री—महाराज ! इस समय दूर २ के सब राजा लोग उपस्थित हैं, इसलिये ऐसा सुअवसर न चूककर स्वयम्बर

कर देनाही उचित है, फिर शत्रुओं का संहार करना तो अपने वश की बात है ।

जयचन्द–अच्छा जब तुम और राजमहिषी दोनोंही इस बात पर जोर दे रहे हो तब इस पर विचार कर तब तुम्हें कहेंगे । अब आज सभा विसर्जन हो ।

[जयचन्द का जाना और पिछे सब सामन्त तथा रानी का भी सोचते हुए धीरे २ प्रस्थान]

बूढ़ा ब्राम्हण–यहां का सब वृत्तान्त तो मालूम ही हो गया । अब संयोगता का पूरा पता लेकर जङ्गम के वेष में दिल्ली पहुंच कर चौहान से सब वृत्तान्त कहेंगे ! अहा ! देखो संसार में लोग प्रेम के नेम को न जानकर कैसी भूल करते हैं । एक के बिना किसी व्यक्ति का प्राण भलेही निकल जाय पर उसका सङ्ग न होने देंगे । ऐसे अवसर पर हमारा धर्म्म है कि इस समाचार को पृथ्वीराज के पास अवश्य पहुंचावें । अच्छा चलें और जङ्गम का रूप धारण कर दिल्ली पहुंचे । (प्रस्थान)

पांचवा दृश्य।

स्थान—संयोगता का अन्तरगृह, काल-तीसरा पहर ।

संयोगता—अहा जब से पृथ्वीराज की चर्चा मेरे कर्ण गोचर हुई तब से हृदय सन्तप्त है। अली कली को देख-कर भी उसको नहीं पाता तब उसकी क्या दशा होती है ठीक वैसेही मेरी जानो। हा प्यारे पृथ्वीराज देखो कब तुमसे मिलन होता है। तुम्हारी वीरता पर मुझे कुछ स-न्देह था पर अब यज्ञ विध्वंस और खोखन्दपुर के सर्वनाश से मेरा सन्देह मिट गया (क्षणेक मौन रहकर) अरे मैं भी कैसी पापिन हूं कि एक व्यक्ति को प्राणपति बना, फिर उस पर सन्देह ! ईश्वर इस विचार पर दृष्टि न डालना यह मेरे विरह की चंचलता से हुआ है। (एक ओर देख-कर) अरे कोई सुन तो नहीं रहा है (भली भांति देखकर) हां है तो दूतीही, देखें अब यह क्या करती है।

(संयोगता एक ओर खड़ी होकर देखती है और दूसरी ओर से दूती धीरे २ इधर उधर देखती भालती आती है)

दूती—हैं बलैयां लूं बेटी ! तू किस फेर में पड़ी है देख तेरे पिता ने स्वयम्बर की सब सामग्री रची है। इस समय महा-राज के दरबार में देश देश के राजा लोग हाजिर हैं उनमें से हे कुमारी तू ! किसके गले में जयमाल मेलेगी ?

[बीच में दो तीन सहचरियों का प्रवेश)

दूती—अरे तुम सब यहां क्या कूद पड़ी ? जांवो २ अपना अपना काम देखो ।

१ सहचरी—क्यों बुढ़िया नानी क्या हम लोगों के सुनने लायक नहीं है क्या ?

दूती—(स्वगत) यह अच्छा बीच में विघ्न पड़ा पर यह सब न आतीं तो संयोगता को ऊंचा नीचा समझाती । इसके मान जाने से अपनी भी मुट्ठी गरम होती । (प्रकाश) नहीं नहीं बेटी ! भला ऐसी कौन सी बात है जो मैं तुम लोगों से छिपाऊं ।

२ सहचरी—नहीं कुछ बात तो अवश्य है ।

दूती—(स्वगत) अब तो कुछ कहना ही पड़ेगा (प्रकाश) कुछ बात यही है कि संयोगता का स्वयम्बर होगा, इसलिये मैं यही विचार कर रही हूं कि देखें यह किस भाग्यवान के गले में जयमाल मेलती है ।

१ सहचरी—अरी तू कैसी बे समझ बूझ की बात कर रही है । मद के मतवारे को स्पर्श कर गङ्गा का गुण गान करना, बांझ के सामने पुत्र सुख का सुनाना और बहिरे के आगे ज्ञान बखान करना न जाने कौन सी बुद्धिमानी है । देखो संयोगता वयः प्राप्त है उससे ऐसी छिछोरी बातें न करो ।

दूती—हां बेटी! मैं कुछ कह थोड़े ही न रही हूं। मैं तो केवल टोह ले रही हूं।

संयोगता—अरे टोह लेना क्या है, जो राजा मेरे पिता का लोह खाकर उसके बन्धुआ बन चुके वे मेरे वर बनने योग्य क्योंकर कहे जा सकते हैं। हे सहचरी! तू कुलीनों की लीक को क्या जाने? सुनो वे लोग जो मेरे पिता को माता पिता समान मानते हैं क्या धर्म के नाते मेरे भाई न हुए। या तो मेरा पाणिग्रहण पृथ्वीराज से होगा या मैं गङ्गा में निमग्न हो मरूंगी।

१ सहचरी—लो नानी! और टोह लो! अब तो टोह पूरे तौर से लग गई।

दूती—बेटी! क्या बताऊं इसमें हम लोगों की खराबी है। महाराज तो हमी लोगों को दोषी ठहरावैंगे कि इतने लोगों के बीच में रहकर बेटी का हृदय उनके शत्रु पर कैसे गया। (प्रकाश) बेटी संयोगता तू कुछ समझ बूझ कर बात करती है या ऐसेही उटपटाङ्ग बातें बक देती है।

संयोगता—बुढ़िया धा मैंने भली भांति सोच लिया है। मैं टुक बड़े बूढ़ों के सामने सकुचती हूं परन्तु कुसमय पाकर कहना पड़ता है कि मैंने पृथ्वीराज से ही विवाह करना विचारा है।

दूती—बेटी! कैसी बौरी हुई है। जिसके लिये माता

पिता बरजते हैं, जिसके खरे खोटे की परख नहीं, उससे सहसा सम्बन्ध स्वीकार करना कैसा ? मेरी सिख मानों और मन में समझ लो।

संयोगता–मैंने भली भांति परख ली है। चामीकर की चमक और चन्दन की सुगन्ध ही परख है। जिस चहुआन की चरचा चतुर्दिक चरचराटे सी चल रही है उसका परिचय क्या।

दूती–बेटी! तू राजकुमारी है और वह लोहार है!

संयोगता-वह, वह लुहार कुल में उत्पन्न है। जिसने शङ्कुरगढ़ को खड़ा जला दिया जिसकी तलवार ने सारा यज्ञ बिगाड़ दिया। जिसने सांडसी के युद्ध में भोला भीम का वध किया और और भी जहां जहां काम पड़ा है तहां तहां उसने आरनी की आग होकर शत्रु समूह को भस्मही कर दिया, जिससे अजमेर में धुंआ हुआ, और मंडोवर में लौ लपटी, सोरारी आदि जिसकी लवर में लिपटे और रनथम्भ और कालिंजर जिसकी ज्वाला से जल गये। अब उसी की चहुआन कृपानरूपी अग्नि गोरी रूपी घड़े को पका रही है।

२ सहचरी–ठीक है सखी ठीक है और भी की सुनो–समस्त मरहटे, नीमच, वैरागर, कर्नाट, कोंकण, आधामालवा देश जिसने निज बाहुबल से दबा लिया और शाह शहाबुद्दीन को जिसने विन प्रयास पकड़ पकड़ कर छोड़ दिया है

... पृथ्वीराज संयोगता का वर होने योग्य ... के पक्ष-राज के अनुयायी अनुचर अन्य राजा लोग ।

दूती-(स्वगत) यह सब तो और भी आग में ईंधन डाल रही हैं । (प्रकाश) बेटी ! अभी भी कुशल है कि तू अपने को सम्हाल ले अन्यथा पीछे पछतायेगी ।

संयोगता-किसी की सिखावन या आग्रह से मैं कैसे पृथ्वीराज को भूल जाऊं । सखियों इस समय मुझ संयोगता को सम्हालो-[यह कहकर एक ओर गिरती है]

दूती-(स्वगत) अहा प्रेम और नेम के बीच में पड़कर मानव जाति का छुटकारा होना कठिनही है । (प्रकाश) बेटी ! अपने को सम्हाल रख ।

सहचरी-संयोगता [धीरे धीरे उठकर] कुछ नहीं, केवल व्यथा मात्र थी ।

दूती-बेटी तू तो निरी बौरी है तेरे विनय मङ्गल पाठ से लाभही क्या ?

संयोगता-न लाभ सही पर सखियों मनुष्य जीवन में बात की बात ही सब कुछ है, यदि बात गई तो जीना किस काम का इसलिये तू मुझे ऐसा उपाय बतला कि जिसमें मेरी बात न बिगड़े ।

१ सहचरी-प्यारी संयोगता ! यदि सच पूछो तो इस यौवन काल में युवापति से मिलनेही में कुशल है । यौवन काल टल जाने पर फिर संसार का सुख कहां !

संयोगता–चुप रहो ऐसी बातें दूसरे से करो। मैं तो तुम्हें बड़ी कर मानती हूं, तुम्हारी लज्जा करती हूं और तुम ऐसी बातें करती हो।

१ सहचरी—यहां बड़े बूढ़े की बात नहीं है मैं सच कहती हूं यह जवानी आम कीसी मंजरी है। जिसकी चोप-रूपी कोप एवं चतुरता की लहलही ललामी के बीच से उत्पन्न, चढ़ती हुई जवानी पंकज के पुष्प के समान है जिसपर कन्दर्प की कोमल प्रभा पड़ती है और रसलोभी प्रेमियो की भौंर भीर उड़ती फिरती है। इस कारण हे संयोगता! मेरी सीख ग्रहण करो। स्वयम्बर में शीघ्रही किसी अच्छे नृप के गले में जयमाल मेल, उसके हिये की हार बनो।

संयोगता—यह सब कुछ है, परन्तु इस शरीर में स्वांसा रहते मैं पृथ्वीराज के सिवाय दूसरे को न वरूंगी। मैंने तो अपना मरना निश्चय विचार लिया है। अबतक केवल उस सम्भरी नाथही की आशा पर स्वांसा चलती है। उस आर्य कुल भूषण का भूलना अब किस प्रकार हो सकता है? गुरुजनों के प्रत्यक्ष या परोक्ष में जो कुछ है मेरा यही पक्ष है।

२ सहचरी–हे सुकुमारी! तू पंगराज जयचन्द के घर जन्म पाकर पृथ्वीराज के घर जाना चाहती है, भला विचारो तो सही, इसमें कितनी आपत्ति और कितना खून खराबा होगा।

संयोगता—अरे चाहे जो हो मुझे तो रात दिन, सोते जागते उठते, बैठते, एक मात्र प्राणेश्वर पृथ्वीराजही प्राणाधार हैं । तुम सब सखी मेरी बात गांठ बांध रक्खो कि जीती जागी तो जोगिनीपति पृथ्वीराज के घर, नहीं तो इसी घर से मरी निकलूंगी । (एक ओर गिरती है और सब सहचरियां संभालती हैं)

दूती—(स्वगत) "यहां न लागहिं राउर माया ।" यहां अब कुछ चलाकी नहीं चलसकती। इसका सब बृतान्त चल कर अभी महाराज से कहना है । (प्रकाश) अच्छा तो सहचरियो ! तुम लोग इनको सम्हालो मैं अभी आती हूं ।

(प्रस्थान)

१ सहचरी—सखी ! संयोगता के सम्मुख प्रेमरस की बातें अब आज से न की जांय ।

२ सहचरी—जब राजकुमारी की यही दशा है तब तो इस प्रसंशा की बातही करनी वृथा है ।

संयोगता——नहीं नहीं वृथा नहीं है मुझे कुंज में लेचलो मेरी व्यथा बढ़ रही है । (सभों का धीरे २ प्रस्थान)

सबसखियां—हां हां, जल्दी ले चलो

(सब संयोगता को पकड़ ले जाती हैं)

छठवां दृश्य।

स्थान-अन्तः पुर, काल-दो पहर

(रानी जुन्हाई का सोच करते हुए दिखाई पड़ना)

रानी—जान पड़ता है कि संयोगता अवश्य ही कुछ भारी अनर्थ करावेगी। न जाने उसकी मति किसने फेर दी है कि सिवाय पृथ्वीराज के वह और किसी का नाम ही नहीं लेती। देखो विधाता क्या करता है। कहां तो यज्ञ के रङ्ग में रंगे प्राणनाथ की क्या आशा थी और कहां यह सब धूलि में मिलगई।

(जयचन्द का प्रवेश)

जयचन्द—प्यारी! कल का दृश्य तो तुमने अपनी आंखों ही देखा अब बतावो क्या किया जाय। मेरी तो बुद्धि ठिकाने नहीं है। हा! संसार में सन्तान का न होना ही अच्छा है।

रानी—प्राणनाथ! मैं क्या बताऊं मेरी तो कुछ बुद्धि ही नहीं काम करती। एक बार फिर समझाने का प्रयत्न किया जाय, देखो यदि वह मान जाय तब तो अच्छा ही है अन्यथा जो होगा सो देखा जायगा।

जयचन्द—अरे क्या अब भी कुछ देखना बाकी है, जो देखना था सो देख चुके। भरी सभा में जिस समय कुल कलंकिनी ने स्वर्ण मूर्ति को जयमाल मेली उस समय मेरे

शरीर का रक्त प्रवाह रुक गया। मैं अवाक् सा रह गया कि या भगवान क्या यह भी देखना था कि जिसने मुझे आंख दिखाई अब उसी के सामने मस्तक नीचा करना पड़ा। मैं अब क्या करूं, मेरा सब यश धूलि में मिल गया। मुझे अब यज्ञ की अभिलाषा नहीं है। हाय! बेटी संयोगता ने क्या किया।

रानी—प्राणनाथ! धीरज धरिये; इतने अधीर होने की आवश्यकता नहीं है। अब भी समय है। पृथ्वीराज को बन्दी करना आप के बांये हाथ का खेल है।

जयचन्द—प्यारी! यह ठीक है, पर क्षत्रित्व में तो धब्बा लग गया। अब चाहे मैं उसे बन्दी कर उसको दण्ड दूं पर जो बात थी वह न रही।

रानी—प्राणनाथ! यह न कहिये आपकी बात बिगाड़ने वाला कौन माई का लाल है। आपकी लङ्का तक धाक है चारो दिसि के राजा आपको कर देते हैं फिर आपको किस बात की चिन्ता है।

जयचन्द—प्यारी! चिन्ता किसी बात की नहीं है, यदि चिन्ता है तो केवल इसी की है कि पृथ्वीराज की मोछ मेरे सम्मुख अब नीची न रहेगी?

रानी—यह कैसे?

जयचन्द—ऐसे कि जब कोई मेरा सामन्त उसे कट

कारेगा तब वह यही ताना मारेगा कि जयचन्द मुझे न माने पर मैं तो उसका दामाद बना बैठा हूं।

रानी—प्राणनाथ! यह ठीक है पर इसकी चिन्ता कुछ नहीं करनी चाहिये क्योंकि संसार के अनेक बातों पर विज्ञ लोग नाम मात्र भी ध्यान नहीं देते।

जयचन्द—प्यारी! यह ठीक है पर मुझे तो पग पग पर सबका मुंह देखना पड़ता है, क्योंकि जिसके मस्तक पर मणि जटित मुकुट रहता है उसका हृदय भी चिन्ता से शून्य नहीं रहता।

रानी—आपका यह कथन ठीक है पर अब इसको दूर करने का कुछ उपाय भी सोचा है।

जयचन्द—मेरे विचार में तो यही आता है कि उस पापिनी को बुलाकर एक बार फिर समझाना चाहिये। यदि मान जाय तो अच्छी ही बात है नहीं तो उसे एकान्त वास का दण्ड दूं।

रानी—मेरी भी यही सम्मति है पर यदि वह इससे भी न माने तब?

जयचन्द—तब वह जाने और उसका भाग।

रानी—अच्छा तो फिर उसे बुलाना चाहिये।

जयचन्द—हां, हां, बुलाओ।

रानी—दासी!

दासी—(आकर) जो आज्ञा मातेश्वरी।

रानी—देखो संयोगता को यहां भेजो

दासी—जो आज्ञा। (प्रस्थान)

रानी—प्राणनाथ! पहिले तो उसे खूब समझाइये पर यदि न माने तो एकान्त वास का दण्ड देना उचित है।

जयचन्द—देखो! पहिले उसे आने दो।

(संयोगता का दासी के साथ प्रवेश)

संयोगता—पिता जी यह संयोगता आपको प्रणाम करती है।

जयचन्द—बेटी प्रणाम तो दूर रहा पहिले तुम यह तो बतावो कि कल भरी सभा में तुमने क्या किया?

संयोगता—जो कि एक क्षत्रिय की कन्या को करना चाहिये।

जयचन्द—क्या क्षत्रिय की कन्या का यह धर्म है कि जो पिता के शत्रु से अपना सम्बन्ध करै।

संयोगता—क्या क्षत्रिय के लोहे को लोहे से उत्तर देना शत्रुता है। फिर मैंने एक शूरवीर क्षत्रिय को अपना प्राण पति बनाना ठीक किया तो क्या बुरा किया।

जयचन्द—क्या स्वयम्बर में हजारो महाराज उपस्थित थे उनमें से कोई तुम्हारे योग्य न था?

संयोगता—पिता जी ! मैं वीर की कन्या हूं इस लिये सच्चे वीर को जयमाल मेलना ही मेरा धर्म था। जो राजा कि आपकी दासता स्वीकार कर यज्ञ में पधारे थे उनके संग मैं कैसे सम्बन्ध कर सकती थी। फिर जब वे विजित हो आपको पिता कह कर सम्बोधन करते थे क्या वे मेरे भाई न हुए ?

जयचन्द—बेटी तू ! किसको रा कुमारी है क्या तुझे खबर है। क्या तू नहीं जानती कि वह लुहार कुल में उत्पन्न है।

संयोगता—ओह ! वह, वह लुहार है जिसने कि सारा यज्ञ बिगाड़ दिया, और फिर इसके अतिरिक्त जहां २ काम पड़ा है तहां २ उसने शत्रुओं को तीन तेरह कर डाला।

जयचन्द—(झुंझुलाकर) बेटी मैं तुझ से शास्त्रार्थ नहीं करता हूं, वरन् ऊंचा नीचा समझाता हूं।

संयोगता—पिता जी आपकी कृपा से जब मैं ब्रह्म-चारिणी अवस्था में विनय मङ्गल पाठ पढ़ती थी तभी ऊंचा नीचा समझने का मुझे ज्ञान हो गया था।

रानी—बेटी ! हठ न कर देख हठ करने से गालब नहुष और राजा वेणु ने बड़े २ संकट सहे हैं।

संयोगता—माता जी यह ठीक है पर उनका हठ और था और मेरा हठ और ही है।

जयचन्द—बेटी ! अब भी समझ जा, मैं तुझसे प्रार्थना करता हूं ।

संयोगता—पिता जी आप मेरे पिता हैं और मैं आप की कन्या हूं । आपकी आज्ञा मुझे माननी ही चाहिये पर पिता जी यह तो बताइये कि आपके क्षण मात्र क्रोध और बात के लिये मैं अपने कुल की रीति को छोड़ कर क्षत्रानी-पन पर धब्बा लगा ऊं ।

जयचन्द—(स्वगत) यह बिना त्रास के न मानेगी । (प्रकाश) बेटी ! बस बहुत हो चुका । अब तुम्हारा अन्तिम काल निकट है । जावो जैसा किया वैसा पावो आज से तुझे एकान्त वास का दण्ड है । (रानी से) राजमहिषी ! इसे गङ्गा के निकटवर्ती महल में एकान्त वास का दण्ड दो और वहां पर केवल दो सौ दासियां रहैं, देखो मातृ प्रेम से मेरी कठिन आज्ञा में नाम मात्र भी कोर कसर न हो । (स्वगत) रे कुलकलंकिनी ! तू जन्मते ही मर गई होती तो अच्छा होता । अस्तु कुछ चिन्ता की बात नहीं प्राण रहते मैं कभी तुझे पृथ्वीराज को न दूंगा । मैं अभी जाकर सेना भेजने का प्रबन्ध करता हूं । (प्रस्थान)

रानी—बेटी ! पिता तो गये पर तू मेरे समझाने से तो समझ जा ।

संयोगता—मातेश्वरी ! समझने योग्य बात मैं क्यों

नहीं समझूंगी, पर भारत की क्षत्रानीं अन्तरात्मा के विरुद्ध कार्य नहीं करतीं ।

रानी—अच्छा नहीं करतीं तो नहीं सही फिर एकान्त बास का दण्ड भोगेगी ।

संयोगता—हां हां मैं सहर्ष भोगूंगी पृथ्वीराज के लिये यदि मेरे प्राण जांय तो मैं अपने को भाग्यवान् समझूंगी ।

रानी—यदि ऐसा ही है तो ऐसे ही सही ।

(दासियों को ताली द्वारा बुलाना और सभों का आना)

दासियां—महारानी जी ! क्या आज्ञा है ?

रानी—महाराज ने संयोगता को एकान्त बास का दण्ड दिया है । इसे गङ्गा के किनारों के महलों में ले जावो और वहां केवल दो सौ दासियां से अधिक न हों ।

दासियां—जो आज्ञा महारानी जी ।

(सब संयोगता को पकड़ती हैं और चलने को तत्पर होती हैं)

संयोगता—ओह सौ दासियों के पकड़ने से क्या होगा ।

सिक्कड़ सौं बांधो यदपि, चंचल चित्त हमार ।
सदा हिये ही मों बसै, चित्त चुरावन हार ॥

(सबका प्रस्थान)

सातवां दृश्य।

स्थान—पृथ्वीराज का दरबार–काल–मध्यान्ह।

[सभा में राजसिंहासन के दोनों ओर शूरवीर सामन्तगण बैठे हैं]

पृथ्वीराज—देखो काल की क्या विकराल गति है, इसका प्रभाव प्राणिमात्र पर पड़ता है। देखो एक समय इसी स्थान पर पाण्डव वीरों ने राजसूय यज्ञ कर संसार में अपना नाम अजर अमर किया था, आज जयचन्द भी उसी का स्वप्न देख रहा है। न मालूम इसका परामर्श किसने दिया?

काकाकन्ह—पृथ्वीराज! यह बात न पूछो, राज्य में नाना प्रकार के लोग रहते हैं। उनका रुख देख कर किसी ने हां में हां मिला दिया होगा।

सलख प्रमार—हां अन्नदाता जी! यही बात है, यदि जयचन्द का मन्त्री मण्डल विचार शील होता तो क्या वह ऐसा परामर्श देता। इस कलिकाल में न तो मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीरामचन्द्र ही हैं और न सम्राट् युधिष्ठिर ही। इन्हों ने वृथाही राजसूय यज्ञ का टंटा उठाया।

पृथ्वीराज—यज्ञ का टंटा तो उठाही था, सुना है कि संयोगता का स्वयम्बर भी ठान दिया है।

निड्डुरराय—हां अन्नदाता जी! गुप्तचरों द्वारा हमें भी यह विदित हुआ कि संयोगता का स्वयम्बर भी ठीक हुआ है।

पृथ्वीराज— सब पता सामन्तों के लौटने पर आपही मिल जायगा । पर अभी तक सामन्त गण आये नहीं इसका क्या कारण है? जान पड़ता है कि भारी लोहा बजाना पड़ा है।

गुरुराम—विलम्ब से तो यही निकाला जा सकता है कि जगचन्द के सैनिकों से मुठ भेड़ हो गई हैं।

पृथ्वीराज—मुठ भेड़ होने से हमारी कुछ भारी हानि नहीं प्रतीत होती, पर यह तो मुझे पूरा विश्वास है कि हमारे सामन्तगण अवश्य ही यज्ञ विध्वन्स कर सके होंगे।

चोबदार—(बीच में बात काट कर) घणीखमा अन्न दाता जी! सामन्त गण दिल्ली से लौट कर आगये।

पृथ्वीराज—(सहर्ष) अहा! इच्छा पूरी हुई, (चोबदार से) अच्छा उन्हें शीघ्र सभा में बुलावो ?

चोबदार—जो आज्ञा अन्नदाता जी! (प्रस्थान)

पृथ्वीराज—जान पड़ता है कि यज्ञ विध्वंस हो गया। सामन्त गणों! अब तो जयचन्द को खूब छकाना है।

सामन्त—हां अन्नदाता जी, जयचन्द को इसका पूरा फल देना चाहिये।

(सामन्तों का प्रवेश)

सब सामन्त—चौहानपति की जय, पृथ्वीराज की जय।

पृथ्वीराज—जय तो पीछे मनाना पर पहिले यह तो बताओ कि यज्ञ विध्वंस हुआ या नहीं ?

सामन्त—धर्मावतार ! होगया । यज्ञ विध्वंस करने में केवल थोड़े से राजपूत काम आये और बाकी सब कुशल पूर्वक लौटे हैं ।

पृथ्वीराज—धन्य वीरों धन्य, तुम लोगों से ऐसे ही पराक्रम की आशा थी । अहा ! धन्य थे वे वीर जिन्हों ने इस कार्य के करने में अपने प्राण गंवाये ।

चोबदार—अन्नदाता जी ! कन्नौज से जंगम आया है यदि आज्ञा हो तो उसे आने दूं ?

पृथ्वीराज—हां हां उसे बुलावो ।

चोबदार—जो आज्ञा महाराज ! (प्रस्थान)

पृथ्वीराज—कन्हकाका ! यह कन्नौज से जङ्गम क्यों आया है, इसमें कुछ गूढ़ बात मालूम पड़ती है ।

काकाकन्ह—अब यह तो उसके आने पर मालूम हो सकता है।

पृथ्वीराज—अच्छा जब आवेगा तब देखा जायगा । पर यज्ञ विध्वंस के उपलक्ष में कुछ नृत्य गान तो होना ही चाहिये ।

निड्डुरराय—हां हां महाराज अवश्य । (दूसरे चोब- (दार से) गायिकाओं को आने की आज्ञा दो ।

चोबदार—जो आज्ञा महाराज! (प्रस्थान)

पृथ्वीराज—मुझे तो ऐसा भास होता है कि मैंने आधा कार्य आजही कर लिया।

सलष प्रमार—महाराज! इसमें भी कुछ सन्देह है।

(गायिकावों का प्रवेश)

गायिकायें— (गाती हैं)

(राग झिझौंटी-ताल तिताला)

जुग जुग यह राज फलै तोरा ॥ टेक ॥

नित नित इत उत जहं तंह रन मंह, वीरन मार करैं घोरा ॥

निड्डुरराय—अरे आज महाराज की सेना ने जयचन्द की सेना पर विजय पाई है और उसका सारा यज्ञ बिगाड़ दिया इसलिये विजय की बात गान में कहो।

गायिकायें—

खोखंद पुर में विजय पताका फर फर फरकत चहुं ओरा।
लौटे शूरवीर सैनिक सब जय जय विजय करत सोरा ॥

पृथ्वीराज—बस आज का आमोद प्रमोद विशेष न हो। कोषाध्यक्ष! इन गायिकावों को अच्छा पुरस्कार मिलै, आज सभा बिसर्जन होती है, कल फिर इसी समय सभा लगेगी।

सब सामन्त—जो आज्ञा अन्नदाता जी!

पृथ्वीराज—अच्छा अब सब कोई पधारे। अभी मैं पुरोहित से कुछ वार्तालाप करूंगा।

सब सामन्त—जो आज्ञा महाराज। (सब का प्रस्थान)

पृथ्वीराज—(गुरुराम से) पुरोहित जी! यह जङ्गम न जाने क्यों आया है, इस कारण उससे वार्तालाप कर, कल आप से सब वृतान्त कहेंगे।

गुरुराम—जो आज्ञा महाराज (प्रस्थान)

पृथ्वीराज—(स्वगत) जान पड़ता है कि इस जङ्गम को जयचन्द ही ने भेजा है। (कुछ सोचकर) पर जयचन्द क्यों भेजने लगा। हो सकता है संयोगता ही ने उसे मेरे पास प्रेषित किया हो। (सोचता हुआ टहरता है)

(जङ्गम का प्रवेश)

जङ्गम—(हाथ जोड़ कर) चौहानपति की जय हो। दिल्लीश्वर की जय हो।

पृथ्वीराज—कहो क्या समाचार लाये हो?

जङ्गम—महाराज सुनिये-कन्नौज राज जयचन्द के यज्ञ में निमन्त्रित हजारों राजा उपस्थित थे। अतः उसी समय सुअवसर देखकर जयचन्द ने संयोगता का स्वयम्बर भी रच दिया। आपकी स्वर्ण प्रतिमा छड़ी लिये हुए द्वारपाल के स्थान पर स्थापित तो थी ही बस उसी यज्ञ मण्डप में निमन्त्रित राजा लोग आ आ कर बैठने लगे। मुहूर्त आने पर संयोगता भी जयमाल हाथ में लिये हुए सभा में लाई गई। कन्नौज का राजकवि आगे होकर एक

. . . . ग्राम और गुन .. करतून बखान करने लगा । इसी तरह होते होते जब उस कवि ने आपकी प्रतिमा के पास आकर आपका नाम लिया और यश बखान किया तो संयोगता ने उसी के गले में जयमाल पहिना दी ।

पृथ्वीराज—जब इसका समाचार जयचन्द ने सुना तब ?

जङ्गम—जब यह समाचार जयचन्द ने सुना तब उसने कहा—नहीं, बेटी चूक गई है, फिर से फेरी की जाय ।

पृथ्वीराज—फिर क्या हुआ ?

जङ्गम—निदान ऐसाही किया गया पर फिर भी संयोगता ने अन्य किसी राजा की ओर आंख उठाकर देखा भी नहीं और स्वर्ण प्रतिमा पर जयमाल मेली, परन्तु फिर भी पङ्गु ने न माना और तीसरी फेरी किये जाने की आज्ञा दी । इस बार कवि लोगों ने भी अपनी सी चतुराई करने में फेर न लगाया । उन्हें ने अन्यान्य राजाओं के बढ़ बढ़ कर बखान किये और आपका केवल नाम कह दिया, पर फिर संयोगता ने उसी स्वर्ण प्रतिमा को वरा ।

पृथ्वीराज—(स्वगत) मेरे लिये संयोगता का इतना प्रेम क्यों । (प्रकाश) हां हां फिर ?

जङ्गम—संयोगता का ऐसा हठ देखकर जयचन्द मोह, क्रोध, ग्लानि, और ईर्षा से व्यथित, होकर बेहोश सा

होगया। वह उसी समय सभा से उठकर अन्तर महल में चला गया और होनहार को प्रबल जान छाती पर घूंसा मारकर चुप रह गया। उसे ऐसा बेहाल देखकर मन्त्री ने कहा-"हे राजन्! होनी अमिट होती है उस पर किसी का चारा नहीं चलता होनहार ही के कारण दक्ष प्रजापति का यज्ञ भङ्ग हुआ। होनी के कारण राजा पांचाल का यज्ञ बिगड़ा और इसी होनहार के कारण राजा रघु को नर्क मे पड़ना पड़ा। हे राजन्! चतुर लोग विद्याओं के बल से भूत भविष्यत् वर्तमान तीनों काल की बात विचार करके कार्य करते हैं, परन्तु सचमुच होनहार क्या है, सो कोई नहीं जानता। इस लिये "बीती ताहि बिसार करि आगे की सुधि ले।"

पृथ्वीराज—फिर मन्त्री की बात पर जयचन्द ने क्या विचार किया?

जङ्गम—मन्त्री की बात पर जयचन्द ने कुछ सचेत होकर संयोगता को गङ्गा के किनारे के महलों में रहने की आज्ञा दी। जब से संयोगता को गङ्गा किनारे के महलों में रहने की आज्ञा हुई तब से वह बराबर वहीं रहती है और नाना प्रकार के जप पूजन, व्रत और देवार्चन करके आपका ध्यान करती और, रात दिन आपही का स्मरण किया करती है।

पृथ्वीराज—(स्वगत) ओह! जब उस क्षत्राणी को हमारी इतनीपरवाह है तब भला यह पृथ्वीराज उसे किस प्रकार भूल सकता है?

(चोबदार का प्रवेश)

चोबदार—अन्नदाता जी ! एक सूफी आया है, और कन्नौज से कुछ समाचार लाया है।

पृथ्वीराज—(स्वगत) कन्नौज से ? अच्छा इसे भी बुलाकर पूछूँ देखूँ यह क्या कहता है। (प्रकाश) अच्छा आने दो।

चोबदार—जो आज्ञा महाराज (प्रस्थान)

पृथ्वीराज—मेरे में भला कौन से ऐसे गुण हैं जिससे संयोगता मेरे पर मुग्ध है ?

सूफी—(आकर) तेरे में वह गुण है जो देवतावों के राजा इन्द्र में है।

पृथ्वीराज—(घबड़ाकर) हैं यह बात आपने कैसे जानी।

सूफी—मेरे पास इसकी तरकीब है।

पृथ्वीराज—तो क्या वास्तविक में संयोगता मुझे अपना प्राणपति बनाया चाहती है।

सूफी—हां हां इसमें जरासा भी शुभः करना तुम्हारा सरासर भूल है। जयचन्द के बार बार मना करने पर भी उसने तीनों मर्तबः उसी मूर्ति ही में माला पहिनाई।

पृथ्वीराज—(स्वगत) जङ्गम की बात यह सूफी भी कह रहा है। इस लिये अवश्य इस बात में कुछ न कुछ सत्यता है। (प्रकाश) क्या तुम्हें और भी कुछ कहना है ?

सूफी—नहीं अब कुछ भी नहीं कहना है खाली यही

कहना था कि तुम संयोगता से विवाह करने में कुछ भी आगा पीछा न करो। (प्रस्थान)

जङ्गम—देखा महाराज! यह सूफी भी हमारी ही बातों का अनुमोदन कर गया है। अब आप सोच विचार में न पड़ कर उस अबला का उद्धार करें।

पृथ्वीराज—जङ्गम तुम्हारी बातों पर मुझे पूरा विश्वास है। मैं इस संयोगता को अपनी प्राण प्यारी बनाऊंगा; और जिस प्रकार उसने सब दुख सहन कर मेरे गले में जयमाल मेली है उसी प्रकार मैं भी उसे अपनाने में कोई बात उठा न रक्खूंगा।

जङ्गम—ईश्वर तुम्हारा भला करै। अच्छा अब मैं जाता हूं। (प्रस्थान)

पृथ्वीराज—पृथ्वीराज! पृथ्वीराज! तू अपने को सम्हाल एक क्षत्रिय का बालक होकर एक राजकुमारी के प्रेम पाश में बंध रहा है। नहीं नहीं यह पाश में बंधना नहीं है, यह तो हमारा धर्म ही है कि मैं उसका उद्धार करूं जो मेरे लिये इतना कष्ट सहन कर रही है। (कुछ सोचता है) प्राणप्यारी! तुमने क्यों मुझे अपना प्राणपति बनाया, अस्तु संयोगता, संयोगता तेरे अधर रस का पान करने वाला यह पृथ्वीराज रूपी मकरन्द तेरे पास तलवार से भन भन शब्द करता हुआ पहुंचेगा। (प्रस्थान)

आठवां दृश्य ।

स्थान—साधारण कमरा; काल—प्रहर रात्रि

(पृथ्वीराज चिन्तित दिखाई पड़ते हैं)

पृथ्वीराज—(स्वगत) तो क्या यह सुकुमारी मेरे हाथ न लगेगी। लगेगी, लगेगी, संसार में कौनसी ऐसी वस्तु है जो पृथ्वीराज के लिये अलभ्य है। साहस चाहिये और उद्योग चाहिये। उद्योग से मनुष्य क्या नहीं पा सकता। (कुछ सोच कर) पर इसका कुछ उपाय भी है? क्योंकि चतुर लोग उपाय से ही अपने कार्यों की साधना कर लेते हैं। (कुछ सोचता है) फिर इस विषय में चन्दवरदाई से बढ़कर और कौन सहायता दे सकता है। वही इसके लिए उपयुक्त पुरुष हैं। (नेपथ्य की ओर देखकर) कोई है ? (दास हाथ जोड़कर "हाँ महाराज" कहता हुआ आता है) (दास से) तुम जाकर चन्दवरदाई को अभी मेरे पास भेजो

दास—जो आज्ञा धर्मावतार ! (प्रस्थान)

पृथ्वीराज—संयोगता तू क्यों हमारे लिये इतनी कठिन और घोर तपस्या कर रही है। जङ्गम के मुख से तेरी प्रशंसा सुनकर मेरा चंचल चित्त चकित हो रहा है।

(नेपथ्य में चन्दवरदाई कहता है)

नहिं रवि लाली की छटा, नहिं प्रभात यहि काल।
चा चकई के मिलन पर, होइहै कौन हवाल ॥

हैं यह ताड़ना कौन दे रहा है। (तनिक सोचकर) सिवाय चन्दवरदाई के और कौन होगा ?

(चन्दवरदाई का प्रवेश)

चन्दवरदाई—कहो ! धर्मावतार ! सब कुशल तो है ? किसी मानसिक व्यथा ने तो नहीं सता रखा है ?

पृथ्वीराज—वरदाई ! तुम जान बूझ कर अनजान बनते हो। अदृश्य काव्य के वर्णन करने वाले से भला कोई बात छिपी रह सकती है ?

चन्दवरदाई—यह ठीक है पर अपना वृतान्त कहो भी तो सही।

पृथ्वीराज—तुम जानते हो कि जयचन्द ने मेरी कितनी अप्रतिष्ठा की है। मुझे ऐसा जीवन तो भार मालूम पड़ता है। तिसपर भी तुर्रा यह कि संयोगता ने मुझी से विवाह करने का प्रण कर लिया है। इस कारण मित्रवर ! अब जैसे बने वैसे कन्नौज चलो।

चन्दवरदाई—महाराज शास्त्र की आज्ञा है कि किसी को कहीं जाते समय रोक टोक नहीं करनी चाहिये, परन्तु आपने पूछा है इसी से कहता हूं। आप जयचन्द के बल को जानते हैं; अभी हाल की बात है उसकी किंचित सेना ने आपके सारे राज्य में हलचल मचा रक्खी थी। हजारों गांव खड़े जला दिए गए और सारा देश लूट पाट कर

उजाड़ दिया था। मैं नहीं जानता कि किसी सहजोर के सामने जा जुड़ना कौन सी बुद्धिमानी है। भला विचारिए तो सही। कोई ताल ठोक कर यमराज की जिह्वा पर जाता है? कोई मतवारे हाथी से हाथ मिलाता है? यही सोच समझ कर कन्नौज जाने की इच्छा कीजिए।

पृथ्वीराज—चन्दवरदाई! तुम किस विडम्बना में पड़े हो। भला हमारी सेना के वेग को कौन रोक सकता है। हमारे सैनिक भी क्या किसी से कम हैं?

चन्दवरदाई—महाराज! यहां सैनिक की बात नहीं है। यहां तो प्रश्न सेना का है। उसके पास सेना अधिक है, उसका पराक्रम और आतंक सब पर विराजमान है। कोई जयचन्द के विरुद्ध चूं तक करने का साहस नहीं करता।

पृथ्वीराज—कविराज! यह ठीक है पर उसके भय से क्या हम अपना क्षत्रियपन छोड़ दें। संयोगता यदि मेरे लिये कठिन तपस्या में प्रवृत्त हुई है तो क्या हम उसे आनाकनी करके भूला दें?

चन्दवरदाई—आनाकनी करने को कौन कहता है पर हां सोच विचार कर काम किया जाय।

पृथ्वीराज—मैंने सब सोच विचार लिया है मित्रवर! हमारी सहायता करो और संयोगता के हरण में कोई उपाय बताओ?

चन्द्वरदाई—(स्वगत) अब इस समय हां या नहीं दोनों ही से छुटकारा नहीं है। यह अपने हठ से मानेंगे ही नहीं इस कारण यदि इनको रानी से सम्मति लेने को कहैं तो कदाचित् हमारा भी छुटकारा हो जाय और कार्य भी बन जाय। (प्रकाश) धर्मावतार! इस विषय में मैं कुछ सम्मति नहीं दे सकता। हां! इच्छन्नी कुमारी से आप यदि सम्मति लें तो वह उचित सलाह देंगी। रहा मेरे लिये मैं सदा आपकी सेवा में तत्पर हूं आप जो कहिए सो करूं और जहां कहिए तहा चलूं।

पृथ्वीराज—(स्वगत) चलो काम हो गया। (प्रकाश) अच्छा तो मित्रवर! अब पधारो मैं रानी से सम्मति ले, तुम से फिर परामर्श करूंगा।

चन्द्वरदाई—हां धर्मावतार! वह आपको उचित सलाह देंगी। (प्रस्थान)

पृथ्वीराज—देखें रानी क्या कहती हैं?

(चलने को तत्पर होते हैं कि नेपथ्य में बन्दियों का गान)

पृथ्वीराज सम आन न कोई॥ टेक॥
अब राजत निज सिंहासन पर मनहुं इन्द्र सम होई॥१॥
एक से एक हुए भारत में कतिपय क्षत्रिय भाई।
याहि समय नहिं रावण राजा बलि अरु कुंवर कन्हाई॥२॥

सहस्रबाहु नहिं हय हय वंशिय, जरासंध अति वीरा।
भीष्म पितामह कर्ण युधिष्ठिर अर्जुन अति रण धीरा॥३॥
सतवादी हरिचन्द नरेशा एकहुं नाहिं लखाहीं।
याही समय जग में मणि माणिक पृथ्वीराज सम न हीं॥

पृथ्वीराज—ओह बड़ी देर होगई है अभी रानी से परामर्श लेना है। रानी अवश्यही मुझे उचित उपाय बतावेंगी। (प्रस्थान)

नवां दृश्य।

स्थान—अन्तरमहल; काल—प्रहर रात्रि

(महारानी इच्छनी अपनी सखियों के संग वार्तालाप कर रही हैं)

इच्छनीकुमारी—(अपनी सखी से) सखी! देख बसन्त की छटा भी निराली ही है। इस ऋतु में वृद्ध बालक सब आमोद से दिवस बिताते हैं। अहा! बसन्त में बनवासी ऋषि मुनि भी ताड़ना खाते हैं फिर इन गृहस्थों का क्या? जब कोयल मधुर स्वर से अलापती है तो मानों विरहियों को बाण सा भासता है।

सखी—राजमहिषी! तुम किस सोच में बैठी हो? (एक ओर दिखाकर) अरे वह देखो महाराज अन्तर महल ही में आ रहे हैं। अच्छा मैं अब जाती हूं।

इच्छनी—अच्छा तू जा मशोक में आना।

सखी—अच्छा (प्रस्थान)

(महाराज पृथ्वीराज का चिन्तित दिखाई पड़ना)

पृथ्वीराज—(स्वगत) शकुन की बात तो दूर रही उस ब्राह्मण का यह सन्देशा कि—"उस चन्द्रवदनी मृगलोचनी बाला के उज्वल ललाट पर श्याम भ्रू भाग ऐसा भासित होता है मानों गङ्गधारा में भुजङ्ग तैर रहे हों। उसकी कीर ऐसी नासिका, अनार दाने से दांत, पतली सी कमर श्रीफल से उरोज और चम्पा के समान सुन्दर सुकुमारी ने मेरे लिये घोर तप व्रत साधन किया है। पृथ्वीराज! जब उस क्षत्रानी ने तेरे लिये विचित्र व्रत उद्यापन किया है फिर तू उसके लिये क्या कर रहा है?

इच्छनी—आर्यपुत्र! प्रणाम क्या मैं सुन सकती हूं कि आप इतने चिन्तित क्यों हैं?

पृथ्वीराज—(स्वगत) अरे कहीं इसने सब सुन न लिया हो। (प्रकाश) कुछ नहीं प्यारी! इसी प्रकार कुछ मानसिक व्यथा है।

इच्छनी—प्राणनाथ! आज यहीं पौढ़े आपकी मानसिक व्यथा मैं दूर कर दूंगी।

पृथ्वीराज—प्यारी! राजा होना भी एक महान कष्ट है। देखो एक भिक्षुक हम से कहीं अच्छा है।

इच्छनी—वह कैसे?

पृथ्वीराज—ऐसे कि वह तो अपना खा पीकर मस्त रहता है और यहां रात दिन यही चिन्ता रहती है कि किससे लड़ाई करूं और किससे मेल। रातदिन इसी चिन्ता में दिवस बीत रहे हैं।

इच्छनी—तो क्या कोई भयानक संग्राम होने वाला है?

पृथ्वीराज—हां भयानक ही समझो, जयचन्द ने राजसूय यज्ञ करना ठाना है, उसी का विध्वंस करना है।

इच्छनी—पर वह तो विध्वंस होगया।

पृथ्वीराज—(स्वगत) अरे इच्छनी इतनी खबर रखती है। अब तो बात बनानी पड़ेगी। (प्रकाश) हां ध्वंस तो होगया पर अभी भली भांति नहीं हुआ है।

इच्छनी—तो क्या हमारे पिता से जो आन पड़ गई थी कहीं वही तो नहीं है?

पृथ्वीराज—(स्वगत) अरे यह तो मानों संयोगता सम्बन्धी सब बातें ताड़ गई है। (प्रकाश) नहीं २ प्रिये! वह बात नहीं है। (स्वगत) पर यदि अवसर मिला तो क्या मैं चूकने वाला हूं।

इच्छनी—अच्छा है हमारी एक साथिनी और बढ़ जायगी।

पृथ्वीराज—प्रिये! अब तो तुम कटाक्ष करती हो।

इच्छनी—अच्छा कटाक्ष तो दूर रहा, आप कन्नौज कृपाकर न पधारें ।

पृथ्वीराज—क्यों क्या क्षत्रिय कुमार किसी से डरते हैं ?

इच्छनी—नहीं डरने की बात नहीं है, यहां तो स्वार्थ की बात है ।

पृथ्वीराज—भला वह क्या ?

इच्छनी—देखो टुक ऋतु की ओर भी तो ध्यान दो । देखो काले २ तमालों में से लाल २ पत्ते निकल रहे हैं । त्रिविध बयार सहजही मन की व्यथा दिन दूनी रात चौगुनी कर रही हैं । कामाग्नि की उद्दीपक कलकंठी कोयलें कू कू कलरव करती हुई मानों कह रही हैं कि संयोगी जनों बसन्त ऋतु में प्रिया को पासही रखो ।

पृथ्वीराज—(स्वगत) प्रिये के बसन्त वर्णन ने तो संयोगता का और भी स्मरण करा दिया । हा ! ब्राह्मणी ने कहा था कि सर्वांग सुन्दरी संयोगता इस समय बसन्त ऋतु की फुलवारी बन रही है । उसका मधुर अलाप मधुकर सा सोहता है; बसन्त ऋतु में जैसे शीतल सुगन्ध वायु मन्द मन्द बहता है वैसेही उसके चित्त में लज्जा की मात्रा बढ़ती जाती है । (प्रकाश) प्रिये ! यह तो तुम ठीक कहती हो पर कार्य वश जाना ही पड़ेगा ।

इच्छनी—मैं विशेष आग्रह नहीं करती पर हां इतना

अवश्य बिनती करूंगी कि आप हमारी प्रार्थना स्वीकार करैं। अहा! देखो इसी ऋतु में भौंरा अपनी सदा संघातिनी कलियों को छोड़कर कमल कली पर कल्लोल करने जाता है। इसका लोभ उसे कमल कली में धंसने को कहता है पर फंसने के भय से झिझकता हुआ अपनी भौंरी के सहित ऊपरही ऊपर भन्नाया करता है। बलहीन भौंरे तो योंही भटक कर चले जाते हैं, भोगी अपनी भौंरी का साथ नहीं छोड़ते, परन्तु असल रसिया कमल में धंस जाते हैं; और फंस जाते हैं।

पृथ्वीराज—(स्वगत) देखो ऋतु वर्णन के बहाने क्याही ताड़ना दे रही है। कोई हजार उपाय करै पर पृथ्वीराज संयोगता को किसी न किसी प्रकार अवश्य ही बरेगा। (प्रकाश) प्रिये! तुम धीरज धरो मैं शीघ्रही फिर आऊंगा।

इच्छनी—प्राणनाथ! शीघ्र या विलम्ब की तो बात ही न्यारी है। देखो वनवासी तपस्वियों को ताड़ना देने वाला बिरहीजनों के हृदय को विदग्ध करने वाला, मनसिज का सच्चा सखा बसन्त एक मात्र संयोगता ही को सुख देता है। अस्तु हे कन्त! इस बसन्त में अनत कहां जावोगे? (यह कह लिपट जाती है)

पृथ्वीराज—(स्वगत) मेरी तो अब सांप छछुन्दर

सी गति होरही है । एक तो संयोगता का स्नेह और दूसरे इच्छनी का वियोग ।

इच्छनी—प्राणनाथ ! आप किस असमंजस में पड़े हैं ?

पृथ्वीराज—असमंजस कैसा प्यारी भला तुम्हारी बात मैं टार सकता हूं ? (नेपथ्य में गान)

(राग बिहाग-ताल-तिताला)

भंवर तू नहिं जानत पर पीर ॥ टेक ॥
निरे गन्ध कर लोलुप ह्वै तू रहि रहि होत अधीर ॥
रहसि रहसि जिय देत सदा तू अन जाने पर प्रेम ।
तरसत रस हित रहत वाहि ढिग छांड़ि अपूरब नेम ॥

इच्छनी—(स्वगत) हाय ! इस राग ने तो और भी चौपट कर दिया अब जल्दी इन्हें शयनागार में ले चलना चाहिये अन्यथा, कहीं फिर न संयोगता के स्नेह में स्निग्ध हो जांय । (प्रकाश) ओफ ! बड़ी देर हुई प्राणनाथ ! अब शयनागार में पधारें ।

पृथ्वीराज—(उठकर) चलो प्यारी चलो पर इस राग ने तो फिर.................................(रुक गये)

इच्छनी—फिर क्या ?

पृथ्वीराज—फिर कुछ नहीं—हां चलो चलो शीघ्र चलो । विलम्ब हो रहा है ।

इच्छनी—(स्वगत) मैं तो सब ताड़ गई हूं पर राजेश्वर अभी तक मुझ से खुलते नहीं हैं । (प्रकाश) अच्छा तो आप चले मैं दासी को आज्ञा देकर अभी आई ।

पृथ्वीराज—अच्छा तो मैं चलता हूं । (प्रस्थान)

इच्छनी—हाय मैंने इतना समझाया पर, प्राणनाथ ने एक न माना मेरी तो बुद्धि ही कुछ काम नहीं करती है । परमात्मा अब तुम्हारे ही हाथ सब कुछ है । (एक ओर लड़खड़ा कर गिरती है)

दासियां—(सहसा आकर) हैं यह महारानी की क्या दशा है ? (सब रानी को सम्हालती हैं)

यवनिका पतन ।
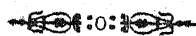
॥ पहिला अङ्क समाप्त ॥

(दस मिनट विश्रान्ति)
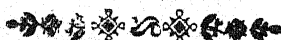
दूसरा अङ्क।

पहिला दृश्य।

स्थान—मार्ग काल—दोपहर।

(सामन्तों का परस्पर बातें करते हुए दिखाई पड़ना)

सलषप्रमार—पुरोहित जी! न जाने किसने पृथ्वीराज को ऐसी पट्टी पढ़ा दी है कि वह किसी की कुछ सुनते ही नहीं। रात दिन आजकल संयोगता ही के धुन में निमग्न हैं।

गुरुराम—अरे भाई हमने भी तो कितना समझाया पर अब वह माने नहीं तो बस समझाना ही भर मेरे हाथ है या और कुछ?

पहाड़राय—पुरोहित जी हमने भी बहुत ऊंचा नीचा समझाया पर उन्होंने हमारी बातों को ऐसी आना कानी करके उड़ा, दिया मानों, कुछ सुनाही नहीं।

(त्रिम्बक का प्रवेश)

त्रिम्बक—अरे भइया टोना वह जो सिर पर नाचे; हमने भी भला क्या कोई कोर कसर बाकी रखा। पर वहां तो मस्तक ठम ठनाने पर भी वही हाय! संयोगता हाय संयोगता।

गुरुराम—हां त्रिम्बक जी आपको तो इसकी अच्छी

परख है; भला अपने ज्योतिष शास्त्र से यह तो बताइये कि संयोगता से संयोग है वा वियोग।

त्रिम्बक—(स्वगत) भइया अपने वेद शास्त्री तो पूरेल वेद शास्त्री हैं, पर भाई ऐसा लवेद मत समझ लेना कि हम निरे वही भोलला भइया के वाहन हैं, समय पर अपना काम ऐसा निकालते हैं कि कोई लख नहीं सकता है कि त्रिम्बक जी ने किया क्या। (प्रकाश) पुरोहितजी! पहिले तो वियोग है फिर पीछे संयोग।

गुरुराम—मित्रवर! यह कैसा? पहिले वियोग फिर पीछे संयोग?

त्रिम्बक—अरे यह ज्योतिष की गणना है (अंगुली पर गिनकर) मेरे हिसाब से ऐसा ही आता है। (स्वगत) यह तो बनी बनाई बात है कि विवाह के पहिले अवश्य ही कुछ लोहू लोहान होगा।

पहाड़राय—अच्छा यह सब तो हुआ पर यह तो बताओ कि किसी प्रकार इस कार्य में विघ्न डाल सकते हो?

त्रिम्बक—(स्वगत) या भगवान! यह तो हमारी ही जीविका पर पानी फेरना चाहते हैं। यहां तो संयोगता के संयोग से चार टका मिलने ही की आशा है। (प्रकाश) भला इससे तुम्हारा तात्पर्य क्या है?

पहाड़राय—तात्पर्य यही कि पृथ्वीराज के यहां जाने

से उनके प्राण का भय है । जयचन्द पृथ्वीराज और संयोगता का बिवाह नहीं चाहता ।

त्रिम्बक--पर संयोगता तो चाहती है ।

पहाड़राय--संयोगता के चाहने से क्या होता है । उसका पिता तो उसके विरुद्ध है ।

त्रिम्बक—पिता को विरुद्ध रहने दो । जब पति पत्नी को गठबन्धन स्वीकार है तो तीसरा उसका क्या कर सकता है ।

गुरुराम—मित्रवर ! इस समय हास्यही हास्य में बात न उड़ावो । इस पर भली भांति बिचार करो ।

त्रिम्बक—भइया इसकी रामबाण तो ऊ चन्दवर दैया के पल्ले है । वही सब कुछ कर सकता है ।

पहाड़राय—हां इस काम को तो वही कर भी सकते हैं ।

त्रिम्बक—यदि ऐसी ही बात है तो हम जाकर चन्द कवि को भेजते हैं, अभी बात ठीक हो जाती है ।(प्रस्थान)

गुरुराम—भाइ पहाड़राय ! हमे बड़ा दुःख है जो पृथ्वीराज नहीं मानते । भला सिंह के मांद में जाकर कोई फिरा है । थोड़े से सामन्त को लेकर भला यह कन्नौज में क्या कर सकेंगे ।

पहाड़राय—भाई इसमें अपना वश ही क्या । जितना हो सका समझाया । अब मानना न मानना उनको धर्म है ।

(चन्दवरदाई का प्रवेश)

गुरुराम—कवि जी ! प्रणाम, नमस्कार।

पहाड़राय—चन्द जी ! प्रणाम।

चन्दवरदाई—कहो क्या स्मरण किया।

पहाड़राय—गुरु जी आप तो विज्ञही हैं, सब वृतान्त तो मालूम ही होगा, पर आपके रहते यह अनर्थ हो रहा है।

चन्दवरदाई—अनर्थ की बात ही है। अपना कार्य, केवल समझा देना है। विज्ञ होकर यदि कोई अनजान बने तो इसमें मेरा क्या दोष ?

गुरुराम—यह ठीक है पर आप सब कुछ कर सकते हैं। अनहोनी बात को होनी, और होनी को अनहोनी कर दिखा सकते हैं।

चन्दवरदाई—हमारी विशेष इतनी प्रशंसा न करो भला मैं किस योग्य हूं।

गुरुराम—योग्य अयोग्य की बात नहींहै, यह आपको करनाही पड़ेगा। न करने में भारी हानि है।

चन्दवरदाई—मैंने बहुत समझाया पर वे मानतेही नहीं फिर उसमें मेरा क्या वश है ?

गुरुराम—पृथ्वीराज इतने धीर वीर होकर भी संयोगता के रंग रूप पर इतने लट्टू हो गये हैं कि किसी की

कुछ सुनते ही नहीं। किसी ने सत्य ही कहा है कामातुरा-नाम न भय न लज्जा।

चन्दवरदाई—यह बात नहीं है, पृथ्वीराज वास्तविक में संयोगता के रंग रूप पर लट्टू नहीं हैं वह तो अपने क्षत्रियपन में निमग्न हैं। अपने लिये संयोगता का कठोर व्रत साधन ही देख कर उन्होंने ऐसा कठिन काम करने का दृढ़ संकल्प कर लिया है।

गुरुराम—भला वह दृढ़ संकल्प क्या है?

चन्दवरदाई—यही कि किसी न किसी प्रकार से कन्नौज चलकर संयोगता को लाया जाय।

पहाड़राय—कवि जी! भारी अनर्थ होगा।

चन्दवरदाई—पर इसके लिये मैं क्या करूं यह तो तत्काल ही चलने को तत्पर थे पर मेरे समझाने से रुक गये।

गुरुराम—फिर क्या इसका कोई उपाय नहीं है?

चन्दवरदाई—मैंने एक उपाय लगाया है यदि लग गया तो अच्छा ही है, नहीं तो फिर कोई दूसरा उपाय करेंगे।

गुरुराम—भला वह क्या उपाय है?

चन्दवरदाई—जब वह कन्नौज चलने के लिये विशेष आग्रह करने लगे तब मैंने अपना पीछा छुड़ाने के लिये इच्छनी कुमारी से सम्मति लेने के लिये भेज दिया।

गुरुराम—अच्छा किया कदाचित् रानी तो कभी भी जाने की सम्मति न देंगी।

चन्दवरदाई—हां देखो कल दरबार में बात चठाई जावैगी अब जो मन्तव्य ठहर जाय।

पहाड़राय—देखो भाई हम तो कोई उपाय बाकी न रखेंगे। अब आगे परमात्मा के हाथ में है।

गुरुराम—अच्छा तो इस विषय में कन्हकाका और निड्डुरराय से भी परामर्श लेना चाहिये।

चन्दवरदाई—हां हां अवश्य चलो चलें। (सबका प्रस्थान)
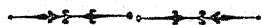
दूसरा दृश्य

स्थान—पृथ्वीराज का मन्त्रणागृह; काल—रात्रि

(पृथ्वीराज सोचते हुए दिखाई पड़ते हैं)

पृथ्वीराज—(स्वगत) देखो चन्दवरदाई भी कोई साधारण पुरुष नहीं मालूम पड़ता, स्वयं सम्मति न देकर राजमहिषी के ऊपर ही सब कुछ छोड़ दिया। कुछ हरज नहीं वीर क्षत्रानी के लिये यह वीर क्षत्री सब कुछ सहेगा पर उसको अवश्यही दुःख से उद्धार करेगा। (एक ओर देखकर) अहा! चन्दवरदाई इसी ओर आ रहे हैं देखें अब यह क्या पूछते हैं?

[चन्दवरदाई का प्रवेश]

चन्दवरदाई—अन्नदाता जी ! आपने महारानी से कन्नौज चलाने के विषय में परामर्श कर लिया वा नहीं ?

पृथ्वीराज—परामर्श तो कर लिया है पर उनकी इस बात में सम्मति नहीं है।

चन्दवरदाई—सम्मति है पर पूरी सम्मति न होगी।

पृथ्वीराज—(स्वगत) अब इनसे कोई बात छिपानी ठीक नहीं क्योंकि यह कबि साधारण कबि नहीं है। जब यह अदृश्य काव्य करता है तो मेरे हृदय की भी बात अवश्य ही जानता होगा। (प्रकाश) हां पूरी सम्मति तो नहीं है पर उन्हें जाने में कुछ उजुर भी नहीं है।

चन्दवरदाई—फिर तो ठीक ही है जब उनकी सम्मति है,फिर बिलम्ब किस लिये, शुभस्य शीघ्रम्।

पृथ्वीराज—पर इस बिषय में टुक सलषप्रमार तथा निड्डुरराय,गुरुराम ,ओर पहाड़राय से भी तो सम्मति ले ली जाय।

चन्दवरदाई—हां हां अवश्य। वे लोग भी आते ही होंगे। (एक ओर देखकर) वह देखिये गुरुराम तो आही पहुंचे

(गुरुराम का प्रवेश)

पृथ्वीराज—पुरोहित जी ! कन्नौज जाने की बात तो आपने सुनी ही होगी ?

गुरुराम—हां! धर्मावतार सब सुना! पर इस बात का किसने परामर्श दिया।

पृथ्वीराज—क्यों क्या आपकी सम्मती नहीं है।

गुरुराम—महाराज इसमें तो मेरी कुछ भी सम्मति नहीं है। आपका कन्नौज जाना बड़ा अनर्थकारी होगा।

पृथ्वीराज – यह क्यों?

गुरुराम – इसी लिये कि जयचन्द और आपकी शत्रुता ऐसी बढ़ गई है कि वह आपको पाकर कभी भी लौटने न देगा।

पृथ्वीराज—न लौटने दे पर मैं तो अपने क्षत्रिय धर्म को निबाहूंगा।

गुरुराम—क्या एक अबला के लिये जान जोखों में डालना क्षत्रिय धर्म है।

पृथ्वीराज—गुरुदेव जिस सुकुमारी ने केवल मेरे लिये कठोर व्रत धारण किया है, क्या मैं उसके लिये इतना भी न करूं कि उसके बचाने का उपाय सोचूं।

गुरुराम—यह कौन मना करता है कि उपाय न सोचो पर आप स्वयं, न पधारें।

पृथ्वीराज—नहीं नहीं पुरोहित जी! मैं स्वयं संयोगता का उद्धार करूंगा। उसी रोज क्षत्रानी का दूध सफल होगा जिस दिन संयोगता का पाणिग्रहण करूंगा।

गुरुराम—अन्नदाता जी मैं यात्रा में विघ्न डालना नहीं चाहता पर इस विषय में राज्य मन्त्री से भी पूछ लेना अनुचित न होगा।

(जैत पूमार का पूवेश)

जैतप्रमार—अन्नदाता को प्रणाम!

पृथ्वीराज—कल कन्नौज की तैय्यारी है, कहो इसमें तुम्हारी क्या सम्मति है।

(सलष पूमार का पूवेश)

पृथ्वीराज—मित्रवर! कल छम्दवेष में कन्नौज की तैय्यारी है।

सलषप्रमार—महाराज! कहीं बदली से सूर्य और वस्त्र के आवरण से अग्निकण छिपते हैं? अथवा यदि कोई दरिद्री रुपयों की ढेरी कर, परख करने बैठ जाय तो उसकी भी असल अवस्था कहीं छिप सकती है? कवि पण्डित, गुणी, विद्वान, घोड़े का सवार राजपूत, और राजा ये लाखों में नहीं छिप सकते, चाहे किसी भी अवस्था में क्यों न हों उनका स्वाभाविक भाव उनको आप बतला देता है।

पृथ्वीराज—तब फिर तुम्हीं कोई उचित उपाय बतलाओ?

सलषप्रमार—यदि यों भी बात मान ली जाय तो इकीदा चलना उचित नहीं है। पूरी तैय्यारी के साथ चलना

चाहिये । ऐसे समय पर आडम्बर ही काम देता है । यदि आप न मानें तो हमारी कुछ भी हानि नहीं । हार जीत की राम जाने हम जयचन्द का यश धूल में मिला देंगे । पर जो कहीं जयचन्द ने जान लिया तो हम तो सब वहीं कट मरेंगे परन्तु आपको वह मारे या छोड़े सो राम जाने, इस लिये मेरी राय यही है कि साज समाज से चलना चाहिये ।

गोयंदराय गहलौत—मंत्रिवर आपका कहना ठीक है पर शहाबुद्दीन भी नित घात लगाये बैठा रहता है, इसलिये दिल्ली को सूनसान छोड़ जाना भी बड़ी भारी भूल है

जैतप्रमार--फिर यहां की रक्षा पर भी एक चतुर आदमी का रहना आवश्यक है । हमारे समझ में यदि सलषप्रमार ही यहां की रक्षा पर रहें तो अच्छा है ।

गुरुराम—हां यहां का भी प्रबन्ध अच्छा होना चाहिये क्योंकि एक तो जयचन्द शत्रु, दूसरे शहाबुद्दीन ।

सलषप्रमार – हमारी राय तो यह है कि रामराय रघुवंशी दिल्ली की रक्षा पर रहैं, औरआप कुछ चुने सामन्तों के साथ कन्नौज को कूच करैं ।

पृथ्वीराज – हम तो कहते हैं कि सामन्तों की आवश्यकता ही नहीं, पर यदि तुम्हारा आग्रह है तो दस बीस सामन्तों को ले लें ।

सलषप्रमार – महाराज दस बीस से काम नहीं चलेगा। कम से कम सौ सामन्त तो अवश्यही ले जाइये।

पृथ्वीराज – अच्छा जो तुम्हारी इच्छा फिर अब सब तैय्यारी करनी चाहिये; क्योंकि मेरा बिचार कल प्रातः काल ही कूच करने का है।

सलषप्रमार – क्यों इतनी जल्दी क्यों ?

पृथ्वीराज – इस काम में जितना हो जल्दी हो उतना ही अच्छा है।

सलषप्रमार – मुझे क्या मैं सब सामन्तों के नाम सूचना भेज देता हूं ! (प्रस्थान)

गोयंद्राय—अच्छा तो अन्नदाता जी अब हम लोग भी अपने २ कार्यों में लगें।

पृथ्वीराज – हां तुम लोग भी जावो, पर देखो यह गुप्त मन्त्रणा किसी को मालूम न हो साधारण सैनिकों को भी यह बात बताई न जाय कि कहां हम लोग जा रहे हैं।

जैतप्रमार—नहीं धर्मावतार भला यह मालूम हो सकता है। (सब का प्रस्थान)

पृथ्वीराज—चन्दवरदाई अब किस वेष से मुझे, कन्नौज ले चलोगे ?

चन्दवरदाई—महाराज चलिये सब सामान ठीक हो जायगा। देखियेगा किस चतुराई से काम निकालता हूं।

पृथ्वीराज – भला तुम्हारे रहते हमारे पर संकट पड़े ?

चन्दकवि – अब हमारी विशेष प्रशंसा न करिये काम पड़ने पर मालूम होगा ।

पृथ्वीराज – अच्छा कन्नौज चलने की बात तो ठीक होगई [कुछ सोचकर] हां यह तो बताओ क्या कोई ऐसी ऋतु भी है जिसमें पत्नी पति को न चाहे ?

चन्दबरदाई – (स्वगत) जान पड़ता है कि संयोगता को याद कर इन्होंने यह प्रश्न पूछा है । (प्रकाश) धर्मावतार आप विशेष बात की चिन्ता न करैं । आपको जिस की चिन्ता है वह आपको नित्य ही चाहेगी ?

पृथ्वीराज – नहीं २ भला बतावो भी तो सही । क्या ऐसी ऋतु भी है ?

चन्दबरदाई – महराज सुनिये यह विषय बड़ा गूढ़ है पर आप से कहता हूं " यदि कमल जल को त्याग दे शेषनाग पृथ्वी को त्याग दें, और मधुप सुगन्धि को त्याग दे पर पत्नि कभी भी पति को छोड़ने की इच्छा नहि करती है । जैसा कहा है: –

जल को जलचर त्यागहीं, जलज ओक अरुमीन ।
अली कली को त्यागहीं, वेदहिं विप्र प्रवीन ॥
पत्नी पति नहीं त्यागहीं, कोउ ऋतुमंह छिनकाल ।
केवल ऋतुवति मय रहैं, बनैं न पिय गल माल ।

पृथ्वीराज – (स्वगत) चन्दवरदाई सा तत्काल उत्तर देने वाला विरलाही कोई संसार में होगा। (प्रकाश) मित्रवर ! तुमने विचित्रबात कही ।

चन्दवरदाई—महाराज यह दास देवी की कृपा से क्या नहीं कर सकता ।

पृथ्वीराज – अच्छा तो अब विशेष विलम्ब की यश्क आवश्यकता है जावो सब तैयारी करो कल प्रात;काल ही मंगल यात्रा होगी ।

चन्दवरदाई – अरे यहां क्या लेना है । पोथी पत्रा बगल में दबाया, बस यात्रा को चल पड़े ।

पृथ्वीराज– अच्छा जावो तुम तैय्यारी करो अभी हमें फिर एक बार रानियों से मिलना है ।(प्रस्थान)

चन्दकवि – किसी ने सत्यही कहा है....

लगी बुरी अति होत है, एहि असार संसार।

मरन जीयन एकौ नहीं, सांसत बारम्बार ॥

सलष प्रमार – (धीरे से आकर) क्या कहूं इस भाट से तो मेरा जी उकता गया । अस्तु जो कुछ हो पृथ्वीराज कन्नौज जाने से मानेंगे ही नहीं फिर मैं क्यों चूकूं अस्तु चलूं एक ओर देखकर अरे यह क्या वह पृथ्वीराज तो राज ड्योढ़ी से उतर चुके हैं। जान पड़ता है कि संयोगता के बिरह में रानियों से अच्छी तरह मिले भी नहीं हैं ।

अस्तु जो कुछ हो उनके चलते २ मैं भी सौ सामन्तों सहित पहुंचता हूं।

तीसरा दृश्य।

स्थान-मार्ग काल प्रभात

[पृथ्वीराज का चन्दबरदाई के साथ २ प्रवेश]

पृथ्वीराज – (अचम्भित होकर) चन्दवरदाई इस देवी के तांडव नृत्य का तात्पर्य क्या है ?

चन्दवरदाई – महाराज इसके तांडव नृत्य का यह फल है कि आप शीघ्रही शत्रु के दर्प को चूर्ण विचूर्ण करके संयोगता का पाणिग्रहण करेंगे।

पृथ्वीराज – कविचन्द-तुम चौदहों विद्यावों में दक्ष, देवी से बरदान पाये हुए बरदाई कवि हो भला इस समय यात्रा का शुभ अशुभ समाचार तो सुनावो ?

चन्दवरदाई – महाराज सुनिये दहिने हो अथवा बांये परन्तु समतल पर बैठी हुई देवी (पक्षी) सदैव शुभ है उसके दर्शन से सहजही यात्री का मनोरथ सफल होता है। यदि वह दाहिने बाजू के किसी वृक्ष पर बैठकर दो या तीन आवाजें दें तो मानो वह पथिक की यात्रा में स्वयं बाधा देकर उसे जाने से रोकती है। यदि वह मण्डल बांध कर उड़ती हो और रास्ता काट कर बांये से दहिने जाय तो शुभ है और उसी समय एक से तीन तक जितने शब्द

करे उतनी ही अधिक कार्य सिद्धि समझनी चाहिये, परन्तु यदि कहीं दाहिने से बांये जाय तो महान अपशकुन जानिये।

पृथ्वीराज - यह तो हुई पक्षी की बात पर यदि कोई हिंसक जीव मिले तब ?

चन्दवरदाई—यह कुछ हिंसक जीवही पर नहीं है, मैं अन्य पशुओं का भी शकुन अपशकुन कहता हूं सो सुनो। यदि तीतर, खर, नाहर जम्बुक सारस चील्ह, उल्लू बन्दर, मोर सुग्गा बायें मिलें तो शुभ है, परन्तु यदि दहाड़ता हुआ सिंह दाहिने हो तो अत्यन्त शुभ समझना चाहिये। परन्तु उससे कार्य्य में भय की सम्भावना अवश्य होती है।

पृथ्वीराज—इनके अतिरिक्त और जानवर मिलें तब?

चन्दवरदाई - उनका भी सुनिये वन बिलाव, घू घू, परेवा, पड़ूंक, या पेंडुकी ये चिड़ियां दहिने मिलें तो अशुभ है। सिरपर दहिनी तरफ कोई पक्षी बोले अथवा शव की रथी सामने आती मिले तो सर्व सिद्धि समझनी चाहिये। भरे हुए कलस, उज्वल वस्त्र वाला दिया अग्नि मछली यदि यात्रा के समय नजर पड़ जाय तो इससे भला और शुभ क्या होगा।

पृथ्वीराज—(हंसकर) क्यों और यदि मर्द सहित

साम्हने आता हुआ कलार मिलै तब ?

चन्दबरदाई—तब क्या, रक्तपात हो, सैकड़ों मारे प
और सैकड़ों विजय का डंका बजाते हुए घर बैठकर आनन्
मनावें।

पृथ्वीराज—(कुछ सोच कर कैमास का स्मरण कर
"हा" इस जीवन में क्या है मरनाही सार है, (फिर सम्ह
लकर अपने सामन्तोंसे कहा) इसमें तो कोई सन्देह नहीं कि तुम
अच्छे परोपकारी हो, मेरे काम पर प्राण न्योछावर करने
पर उद्यत हो, तिस पर भी गंगा के किनारे धारा क्षेत्र में
प्राण देना परम कल्याणकारी है।

चन्दबरदाई—(स्वगत) देखो पृथ्वीराज ने कैसा अपने
को सम्हाल कर कैमास का विरह प्रगट होने नहीं दिया
मन्त्री कैमास के मरने का इनको बड़ा शोक है। (प्रकाश)
हां अन्नदाता जी! इसमें क्या सन्देह आपके सामन्त
छाया के समान आपका साथ देने वाले हैं।

पृथ्वीराज—(बात काट कर) फिर चलो अब दूसरा
मुकाम आगे बढ़कर किया जाय।

चन्दबरदाई—हां हां महाराज चलिये।

पृथ्वीराज—(चलने को तत्पर हो और एक ओर
देखकर कहना) वह क्या बरदाई! देखो वह दुल्हा बना
हुआ पुरुष अपनी दुलहिन के साथ चला आ रहा है और

वह क्या सामने के बन में काला मृग भी दिखाई पड़ रहा है (बीच में श्यामा पक्षी की आवाज़ सुनाई पड़ती है) यह क्या मित्र! आज कुछ अनहोनी तो नहीं है ?

चन्द्बरदाई – नहीं महाराज आप घबड़ाइये मत ईश्वर सब कुशल करेंगे ।

पृथ्वीराज – (नेपथ्य की ओर दिखाकर) और फिर वह देखो एक जोगिनी भी हाथ में खप्पड़ लिये चली आरही है । और फिर उस नट का तो देखो उसके अंग प्रत्यंग कट कट कर गिर रहे हैं और लो वह तो अब स्थल पर पूरे शरीर से होकर थर थर कांप रहा है ।

चन्द्बरदाई – (स्वगत) हैं तो ये सब अपशकुन के सामान पर राजा को समझा रखना चाहियें । (प्रकाश) महाराज इन शकुनों से आप कुछ वहम न लाइयें । पहिले तो कुछ रंग में भंग होगा पर पीछे आनन्द ही आनन्द है ।

पृथ्वीराज – अच्छा फिर चलो पड़ाव पर चलें, अब कल आगे बढ़ा जायगा ।

चन्द्बरदाई – हां महाराज! यही मेरी भी सम्मति है ।

(दोनों का धीरे २ प्रस्थान)

नरनाहकन्ह – जैतराव अब मुझ से नहीं रही जाती। मैं तो अब राजा को रोकूंगा। देखो इतने अपशकुन हो रहे हैं।

जैतराव - भाई इसमें तो हमारी कुछ बुद्धि ही नहीं काम करती।

नरनाहकन्ह - जैतराव तुम राजा को रोको। यदि इसमें प्राण भी जाय तो कुछ परवाह न करो।

जैतराव - अरे भाई मैं क्या करूं मैं तो पहिले ही सिर पीट चुका हूं।

पज्जूनराव - भाई साहब यह सब भटवा की करतूत है, कन्नौज पहुंचकर देखना यही दृश्य सच्चा होकर आगे आवेगा।

नरनाहकन्ह - सुनो कूरंभ राव सोच बिचार करने से क्या होता है, जो कुछ होनहार होगी सो तो अवश्य ही होगी। सब ने हजार समझाया, पर युधिष्ठिर ने एक न माना और दुर्योधन के साथ जुआ खेला पर खेला। लक्ष्मण के रोकते हुए भी रामचन्द्र स्वर्णमृग के पीछे दौड़े गये, मन्त्रियों के मना करने पर भी रावण ने सीता को रामचन्द्र जी को वापस न दिया। यदुवंसियों ने जान बूझ कर दुर्वासा का शाप लिया इसी प्रकार इस पृथ्वीराज ने कैमास ऐसे मन्त्री को मार कर चामुण्डराय के पैरों में बेड़ी डालकर सब सामन्तों का जी खट्टा कर दिया।

पज्जूनराव—फिर मित्रवर! कुछ होनी अनहोनी मालूम पड़ती है, होनहार की विशेष घड़ी अब मानों आ पहुंची है।

नरनाहकन्ह—इस में भी कुछ सन्देह है अरे अब भला इस से विशेष होनहार और क्या होगी जो होनहार होनी है सो ही राजा के चित्त में बस कर उस से यह सब अनर्थ करवा रही है। इन सगुन असगुनों को क्या राजा नहीं जानता? जानता है, पर होनहार के वश हो कर उस के विरुद्ध कुछ कर नहीं सकता। चलते ही समय उसे सब ने कहा सुना पर किसी की न मानी और चल पड़ा। हम लोगों को क्या यह नश्वर शरीर सदा नहीं रहता है, यदि इस तरह से काम आवेंगे, तो उधर हमारी आत्मा परमात्मा में मिलेगी इधर कवि लोग सुयश बखान करेंगे। फिर क्या आप मरे जग डूबा।

पज्जूनराय—अच्छा भाई अब इन सब पचड़ों को रहने दो। अपने लोगों का कहा राजा मानते ही नहीं फिर वृथा मुड़पच्चन करना यह बुद्धिमानों का काम नहीं है।

नरनाहकन्ह—नहीं नहीं मित्र! हताश नहीं होना चाहिये। प्रयत्न करने में क्या लज्जा। मान जाय तो अच्छी ही बात है न, यदि लगा तो तीर नहीं तो तुक्का है।

पज्जूनराय—अच्छी बात है पर आशा दुराशा मात्र है।

नरनाहकन्ह—अच्छा फिर आशा दुराशा पड़ाव पर चल कर देखा जायगा। चलो वहां कुछ और सामन्तों से भी तो राय ले लें।

पज्जूनराय—हां हां चलो। (सब सामन्तों का प्रस्थान)

चौथा दृश्य ।

स्थान—जयचन्द का दरबार । काल-तीसरा पहर

(बड़े २ सामन्त सरदार लोग सिंहासन पर बैठे हैं और जयचन्द के आने की बाट जो रहे हैं)

चोबदार—सावधान सामन्त, गण रहहु सभा के बीच ॥
पंग राज सौं नित डरैं अभिमानी हू मीच ॥

(जयचन्द का प्रवेश)

जयचन्द—सामन्तों ! आज सभा में गूढ़ विषयों पर विचार होगा । एक म्यान में दो तलवार नहीं रह सकती । अब या तो भारत में संभरीनाथ रहैगा, अथवा पगंराज ही अटल राज्य को सुख भोगेगा ।

एक सरदार—ठीक है धर्मावतार ! सिंह के गुफा में हाथ डाल कर भला कोई बच सकता है । जो उन्हों ने हम लोगों को छेड़ा है तो अवश्य ही वे इस का फल पावेंगे ।

जयचन्द—आज चन्द कवि भी आता है देखो उसे विकट प्रश्न करके हम कुछ उधर का पता अवश्य लेंगे ।

(हेजम कुमार को चन्द कवि के साथ २ प्रवेश)

चन्दबरदाई—जिमि ग्रहपिति ग्रहपंति ।
जिमि सु उडुपति तारायन ॥
मधि नायक जिमि लाल ।

जिमि सु सुरपति नाराइन ॥
जिमि विषयन संग मयन ।
सकल गुण संग सील जिमि ॥
वरन मध्य जिम उगति ।
चित्त इन्द्रिय जालह तिम ॥
अवि अनि नरेड भर भीर सर ।
दारिम नृप मंदिर भरिय ॥
दिख पगं पानि उन्नति करिय ।
सुकविचन्द आसिष दिय ॥

महाराज यह तो आशिर्बाद हुआ पर अपनी बैठक का वर्णन तो सुनिये –

इस दर्बार में अन्य राजा लोग, ग्रहों के मंडल एवं दिग्पालों से सुशोभिति होते हैं और उनके मध्य में महाराज जयचन्द दिग्पालों के स्वामी से प्रतीत होते हैं। मैं कहूं तो क्या कहूं आप धन्य हैं। आप मानों दूसरे इन्द्र हैं। जहां तहां रंग विरंगे गलीचों की आभा वरसात के बहुरंग बद्दरों को मात करती हैं। अहा धन्य है यह सभा। महाराज के बाजुओं पर दुरते हुए र ऐसे चैांप्रतीत होते हैं मानों सूर्य की प्रखरता देख कर चन्द्रमा ने आन की हो और सीस पर जड़ाऊ छत्र तो साक्षात् ऐसा सुशोभित होता है मानों नवग्रह परस्पर विरोध भाव छोड़ कर महाराज

की छाया के लिये छत्राकार हो गये हों और करोड़ों काम, की कलावों के समाज दिव्य द्युतिधारी महाराज की तो मैं क्या प्रशंसा करूं ।

जयचन्द—कविवर मैंने तुम्हारी बड़ी प्रशंसा सुनी है। अच्छा अब तुम सिंहासन पर विराजो तो सही।

(दो चार सामन्त उठ कर बैठाते हैं)

चन्दबरदाई—महाराज ! आप की जय हो । मेरे अहो भाग्य जो ये आराम मिल रहे हैं ।

जयचन्द—अच्छा कविचन्द ! मैं तुम से पृथ्वीराज के विषय में कुछ प्रश्न करना चाहता हूं; क्या तुम सत्य सत्य उत्तर दोगे ?

चन्दबरदाई—महाराज ! जिस के अचल दलबल के आतंक से फनीशपति सटपटाते हैं। और कमठ की खोपड़ी खड़खड़ाती है; जिस के दल के चलने से पृथ्वी कांपती है भला उस नरश्रेष्ठ राजा जयचन्द के आगे किस की सामर्थ्य है जो झूट कह सके।

जयचन्द—हां हां फिर कहो क्या उस का आतंक मुझ से विशेष है फिर क्या समझ कर उसने यज्ञ विध्वंस किया।

चन्दबरदाई—महाराज तो भी सुनिये —

जाकी फिरी दुहाइ, चहूं दिशि भारत माहीं ।
जाके पास अनेक सूर समरत्थ लखाहीं ॥

जो बल सैं सब देस धर्म सैं दस दिग्पाला ।
जीत्यो चारिहुं ओर, कियो निज शत्रु विहाला ॥
शाह सहित सब अन्य नृपन को ओहल कीन्ह्यो ।
निज आतंक जमाय, सबन सैं निज कर लीन्ह्यों ॥
तिरहुत में बैठाय दियो निज चौकी न्यारी ।
सेतबन्ध लैं कियो विजय दक्षिणपुर भारी ॥
बान्ध्यो नेकनवार कर्ण दाहल अभिमानी ।
कियो सिद्ध चालुक्क विजय तिलगानासानी ॥
गोलकुंड पर थाप दियो निज विजय निशाना ।
गुड्जीरा को बांधि बांधि तोड़्यो अभिमाना ॥
शाह मानि निज मित्र भ्रात को दूत बनाई ।
भेज्यो तव दरबार मांहि निज निसुरत भाई ॥
अस जय चन्द को नाम सुनत कांपै संसारा ।
पर इक पृथ्वीराज छिनहु नहिं करै बिचारा ॥

जयचन्द—भला जिसे ईश्वर ने ही मंगना बनाया उस का दरिद्र जाय तो क्यों कर जाय । राजा या धानी लोग दान द्वारा सदा धन रत्नों की वर्षा किया करते हैं; परंतु जिन के सिर पर दरिद्र का छत्र अच्छादित होता है उन पर एक भी बून्द नहीं पड़ती । और फिर क्यों कवि-चन्द । मुंह का दरिद्री, घास खाने वाला कृशतन पशु जंगली राव की शरण में रह कर भी दुबला क्यों है ?

चन्दबरदाई—उस जंगली राव पृथ्वीराज चौहान ने घोड़े पर चढ़ कर दूर दूर के देशों में अपनी दुहाई फेर दी। निर्बल तो उस के आश्रित हुआ है पर जो लोग अपने को सबल समझते थे वे भी उस के आतंक से डर कर कांप गये। उन में से बहुतेरे तो वृक्षों के मूल में मूड़ डाल कर रह गये और बहुतेरे दांत में तिनका दबा कर उस के आगे आये। इस तरह से राजा पृथ्वीराज के शत्रुओं ने सब घास उजाड़ दी अब बरद क्या खा करके हृष्टपुष्ट रहे।

जयचन्द—मोती न पाने से न्याय सम्पन्न हंस दुर्बल होता है। गजराज की गरदन का रक्त न पाने से सिंह दुबला होता है। नाद के कारण बंधन में पड़ा हुआ मृग दुबला होता है परन्तु, बैल के भी उहोने के जो कारण होते हैं उन में से इस समय एक में चित नहीं हैं। देखो न तो असाढ़ का महीना है जिस सूखी घास और भूसा खाने को मिलै और रात दिन जोताई पड़ती होती; न रात दिन पुरवट खींचनी पड़ती है, न किसी गंवार के पाले पड़ा है कि वह मन माना बोझ लाद कर नाथ खींचता हो और ऊपर से डंडे जमाता हो न रहट में चलाया जाता है, न रथ में जोत कर अरई लगा दी जाती है, तब कहो बरद फिर बरद दुबला क्यों है?

चन्दबरदाई—महाराज सुनिए जिस के स्वामी के यहां

सहस्त्रों घोड़े हाथी उपस्थित हों वह रथ में कंधा क्यों दे, क्यों पुरवट खींचे, क्यों रहट में जुते और पीठ पर भार ढोवे। बात यह है कि पृथ्वीराज के शत्रुओं पर सदा शोक की घटा छाई रहती है, अस्तु अपने स्वामी के सुयश बखान रूपी कुसिया से उसका हृदय रूपी क्षेत्र जोतने में रात दिन लगा रहता है। उधर वे लोग सब खर खा लेते हैं, इसी से बरद दुबला है। देखिये पहिले नागोर में शहाबुद्दीन बांधागया, फिर मेवाती मुगलों का मुंह मोड़ा गया—इसी प्रकार और भी जानिये। बस इन सब विजित शत्रुओं ने दांत में तिनके दाब दाब सब घास चौपट कर दी, अब भी बरद दुबला न हो तो क्या हो?

जयचन्द—(ठंडी सांस लेकर और अकड़ कर) हां यदि पृथ्वीराज मेरे साम्हने आवें तो बताऊं।

चन्दवरदाई—त्रिलोक के मालिक कैलाशपति शिव बैल पर सवार हैं, उन के गले में सर्पों की माला है, और सर्प के सिर पर यह पृथ्वी है जिस पर सातो समुद्र और सुमेर स्थित है। सप्तपुरी और ब्रह्म पुरुष भी उसी पृथ्वी पर हैं अतः ये मेरे अहो भाग्य हैं कि महाराज के श्रीमुख से मुझे बैल की उपाधि मिली।

जयचन्द—वाह कविजी बहुत अच्छे, क्या कहूं पृथ्वी-राज मुझे मिलतेही नहीं, उन के पिता मेरे पिता के मामा

होते थे; उन दोनों में परस्पर जैसी चाहिए वैसी पटती रही। जब सोमेश्वरजी का दिल्ली में बिवाह हुआ है तब उन्होंने बहुत सा धन रत्न दिया था। तब से फिर अब तक कुछ नहीं लिया दिया। तुम जानते हो कि ज्यों ज्यों दिन बीते जाते हैं त्यों २ दान का ऋण अधिक होता जाता है सो हम और कुछ नहीं चाहते जैसे और सब राजा लोग इस दरबार में आते हैं वे भी आवें उन का घर है।

चन्दबरदाई—आप का हुकम होता है सो ठीक है पर वे अपनी करनी करते ही जाते हैं। एक बार की बात है कि जब आप एक समय दक्षिण विजय करने गये थे उस समय कन्नौज को सूना पा यवनपति शहाबुद्दीन गोरी चढ़ आया था पर संभरीनाथ ने उसे सरहद्द ही पर रोक कर उस को मार भगाया।

जयचन्द—(हंस कर) मुझ को कुछ भी खबर नहीं कि गजनी शाह कब यह आया; और चौहानों ने कब मेरा राज्य बचाया था—सब सविस्तार कहो—

चन्दबरदाई—सम्वत् चौंतीस की बात है कि एक मर्तबा जब आपने दक्षिण में चढ़ाई की तब इधर शहाबुद्दीन अपने मीर पीर जादों के साथ चढ़ आया। जिस समय अषाढ़ के मेघों की भांति धौंसा धमकाती हुई शाह की चतुरंगिनी सेना हिन्दुस्तान की ओर चली तो उस के आतंक

से सब भारतवासी दबक कर रह गए। जब सैना कुन्दनपुर के पास पहुंची है तो वहां के बघेले सरदार ने हथियार पकड़े और शाही चौकी के सिपाहियों को मार कर भगा दिया । जब शहाबुद्दीन को खबर लगी तो उस ने फिर तत्तार खां को भेजा, इधर से राय रनसिंह बघेला भी आ डटा। दोनों वीर भयंकर संग्राम करने लगे। अन्त में शहाबुद्दीन के बाण से बघेला सरदार मारा गया ।

जयचन्द—फिर इस के बाद क्या हुआ, हमें तो यह बात गढ़न्त भासती है ?

चन्दबरदाई—अब ज़रा आगे तो सुनिए-बघेला सरदार के मरने पर फिर तो राजपूती सैना मानों बे दूलह की बरात ठहरी। सब राजपूत कट मरे और कुन्दनपुर मे गजनी पति का झण्डा गड़ गया। गाओं का सत्यानाश करते हुए जब शाही फौज अल्हन सागर तक आयी तब पृथ्वीराज को खबर लगी। उस समय पृथ्वीराज नागौर में थे, उक्त समाचार को पाकर काका कन्ह,चहुआन राय, वीरसिंह लखन बघेला, लोहाना आजानु बाहु, पुंडीर राम राय, बड़गुज्जर झिंझराज चालुक और हाहुलीराय हम्मीर आदि सामन्तों को बुला कर कहा कि देखो यह म्लेक्ष कन्नौज पर चढ़ा जाता है। यदि इस ने यहां कुछ गड़बड़ बढ़ाया तो धिक्कार है हम को। पृथ्वीराज की ऐसी इच्छा देख कर और समान्त

तो चल पड़े पर हमें कैमासऔर चामुण्डराय को बुलाने के लिए भेजा। पृथ्वीराज ने सारुंडपुर में डेरा डाल कर शाही सेना का पता लगाया। वहां से शाही सेना अट्ठाइस कोस के फासले पर थी। फिर सारुंडपुर से चल कर शंकरपुर के बगीचे में पड़ाव पड़ा।

जयचन्द–फिर क्या हुआ?

चन्दवरदाई–फिर पृथ्वीराज ने कहा कि शाही सेना सबल है और हम लोग थोड़ा हैं दूसरे मेड़े डांडे का मामला ठहरा। इस से रात को पहरा की जाय तब बात ठीक उतरेगी। सब ने इस बात को मान ली दूसरे दिन शाही चौकी पर छापा मारा। वहां धरा ही क्या था सो सवा सै सिपाहियों को मार काट साफ कर दिया। दोचार भगे भुगे शाह केपास पहुंचे जिस से वह भी सचेत हो गया। थोड़ी दूर जा कर दोनों सेना की मुट्ठ भेड़ हुई। छप्प छपा छप्प तलवारें चलने लगीं। बस फिर क्या था माई के लाल तो थेई थेई करते २ कटने लगे। देखते२ लोथों की अटम्ब लग गई। चामुण्डराय ने पास पहुंच कर शहाबुद्दीन के हाथी को ऐसी तिहाई इंटाई कि सब मामला बन गया। हाथी हौदा छोड़ कर भागा और शाहसाहब वहीं गिर पड़े उस के गिरते देरी न थी कि चामुण्डराय ने कमान जा डाली और उस का बाजू जा पकड़ा।

जयचन्द-(घबड़ा कर) फिर आगे क्या हुआ?

चन्दवरदाई—फिर चामुराइराय ने तीन लाख मुसलमानी सेना काटी। शाह को बन्दी कर पृथ्वी राज वहां से पांच कोस पर दरपुर में मुकाम किया और दो दिन बाद आठ हजार स्वर्ण मुद्रा दण्ड में लेकर शाह को सादर गजनी को बिदा किया। शाह की विशेश क्षति हुई पर पृथ्वीराज के इन गिने वीर मरे।

जयचन्द—उस पृथ्वीराज के पास ऐसी कितनी सेना है, और उस में कितने सूरमां हैं जिन का ऐसी बखान करते हो।

चन्दवरदाई—उन के परिकर में कितने हाथी घोड़े हैं, अथवा उनकी सेना में कितने सूरमां हैं, और वे कैसे कैसे पहलवान और पराक्रमी हैं। बस इसी में समझ लीजिये कि लमहर की तरह तेजस्वी पृथ्वीराज जिस और को आंख उठा कर देख देता है उस तरफ तिमिर की नाईं उसके शत्रुओं का पता तक नहीं चलता। प्रथम तो उन के सामन्त ऐसे बलवान हैं कि जब वे हाथी पर तलवार का वार करते हैं तो वह ककरी की तरह कट कर दो हो जाता है और हाथों से हाथी के खीसे मूली की तरह उखाड़ लेते हैं क्या कहूं महाराज पृथ्वीराज ऐसा तो कोई दिखाई ही नहीं पड़ता फिर उपमा दूं तो किस का दूं।

जयचन्द–अच्छा यहां छत्रधारी के लक्षणों सयुंक्त इतने मुकुट बन्ध राजा बैठे हैं फिर इन में किसी की छिबी मिलती हो तो कहो ?

चन्दवरदाई—बत्तीसो लक्षण संयुक्त छत्तीस वर्ष की वयबाला राजा पृथ्वीराज ऐसा तेजस्वी है कि बड़े २ ताप से प्रतापी राजाओं पर वह राहू हो कर लगता है। कोई उसे पृथ्वी देते हैं, कोई धन देते हैं कोई उसकी सेवा में तन और मन देते हैं कोई इधर भाग निकलते हैं और कोई छांह भी नहीं दाबते वे राजा पृथ्वीराज ऐसे हैं, जैसे गोकुल में कन्ह, पार्थ के पुत्र अभिमन्यु, लंका में रावण और अयोध्या में दशरथ सुत रामचन्द्र हो गए हैं।

जयचन्द—(आवेश से क्रोधित हो कर) ऐसा राजपूत का बेटा कौन है ? कविचन्द बहुत चप चप चाव न चलाना नहीं तो यहीं खड्डा खुदवा कर गड़वा दूंगा। [जयचन्द की बात पर पृथ्वीराज का रंग बदलना, पर कहीं भेद खुल न जाय इस से अपने को सम्हालते हैं।]

पृथ्वीराज—(स्वगत) कविचन्द क्या एक गायरे पर दो सिंह रह सकते हैं। क्या कहूँ संयोगता के कारण सब सहना पड़ता है नहीं तो जयचन्द की सभा में यह पृथ्वीराज हड़कम मचा देता।

जयचन्द—(बात टाल कर स्वगत) मुझे इस खवास

पर कुछ सन्देह होता है क्योंकि मेरे बिगड़ने के साथ ही इस को भी त्योरी क्यों बदली है ? अच्छा बात सम्हालनी चाहिये । (प्रकाश) तुमने पृथ्वीराज की तो खूब सुकीर्ति बखानी अच्छा अब कुछ कवित्त तो कहो ।

चन्दबरदाई--[स्वगत] अब तो बात बिगड़नी चाहती है । क्या करें पृथ्वीराज का सम्हालना तो मानों यमराज से मुकाबला करना है । (पृथ्वीराज से) अरे क्या आफत मचावोगे टुक शान्त हो ।

जयचन्द—(स्वगत) पृथ्वीराज ऐसा प्रतापी पुरुष कविचन्द को छग्गर लेकर मेरे दरबार में क्यों आने लगा । खैर जो हो अभी बिना समझे अधीर न होना चाहिये । [प्रकाश] कविचन्द ! देखो कहा सुनी में वृथा बात बढ़ जाती है, कुछ और की और हो जाती है, यदि पृथ्वीराज मेरे सामने आवें तो उसी समय हमारा उन का फ़ैसला हो जाय पर न जाने वह क्यों मुझ से मिलते ही नहीं ।

चन्दबरदाई—महाराज पृथ्वीराज कोई ऐसे वैसे पुरुष नहीं हैं । वे बड़े नीतिज्ञ हैं, जैसे आप को अपनी बात की बान पड़ी है तैसी उन्हें भी अपनी बात की आन है । राजा पृथ्वीराज चक्रवर्ती राजा अनंग पाल के निज दौहित्र हैं, उन्हों ने जब अपने हाथों तिलक काढ़ कर अपने दिल्ली के राज्य को दे दिया, तब इस में किसी का क्या, उन्होंने वह

राज्य किसी छल छिद्र से नहीं पाया है जो किसी से दब कर रहें।

जयचन्द--सुनो भई मैं पृथ्वीराज से दिल्ली के राज्य पर नहीं चिढ़ा हूं, यदि ऐसा होता तो जब अनंगपाल शहाबुद्दीन की सहायता लेकर दिल्ली पर चढ़ आए थे, तब मैं मुसलमानी सेना का मोरचा मार कर पृथ्वीराज ही का पक्ष क्यों करता। मुझ तो गुस्सा इस बात पर है कि उन्होंने ठाले बैठे उपद्रव करके मेरा यज्ञ बिगाड़ दिया, इस पर भी मैने उन्हें अपना जान कर छोड़ दिया नहीं तो इस का मजा चखा देता कि जयचन्द से बैर विसाहना ऐसा होता है।

चन्दबरदाई—भला ऐसा कौन है जो जान बूझ कर किसी के छल में फंस जावें पितृ द्रोही पर दया करें, सांप के मुंह में उंगली डाले और अपने पैर पर आप कुल्हाड़ी मारे।

जयचन्द—देखो कविचन्द! संसार में जो कुछ है सो नीति ही है जो लोग यह समझते हैं कि नीति का केवल राज्यकार्य से सम्बन्ध है, वे बड़ी भारी भूल करते हैं सामाजिक व धार्मिक व्योहारों का धूरा भी इसी पर धरा हुआ है, छोटे से लेकर बड़े तक सब कार्य इसी नीति ही द्वारा पूरे पड़ते हैं। पर हां इतनी विशेषता है कि जो राजा नीति विहीन हो कर राज्य करता है उस धर्म हीन कलंक क्षत्रिय

को जीने से मर जाना भला है।

चन्दवरदाई—धर्म्मावतार ! यह भी तो बतलाइये कि इस कलि काल में कहीं राजसूय यज्ञ होता है। अब की क्या पहिले की देखिये राजा बलि ने यज्ञ किया सो बांधे गए, चन्द्रमा ने कलंक काटने के लिये यज्ञ किया था सो उस का सारा शरीर जर्जर हुआ। राजा रघु ने यज्ञ किया था सो नरक में पड़े। हां सीता के त्याग से दुःखी हो कर जब विचार वान रामचन्द्र ने यज्ञ किया था तब कुबेर स्वयं उन का सहायक था, द्वापर में पांडवों ने यज्ञ किया था सो उन की सहायता पर स्वयं कृष्ण भगवान थे, इस कलयुग में कौन राजसूय यज्ञ कर सकता है?

जयचन्द—अस्तु इन बखेड़ों को लेकर क्या करना है, अपनी सुकीर्ति कौन नहीं चाहता।

चन्दवरदाई—यही बात तो पृथ्वीराज के गले पड़ी है। महाराज राज नीति हंसी खेल नहीं है यह मंत्री ही का काम है कि प्रजा और राजा दोनों को प्रसन्न रख कर काम साधे। देखिये यह राज नीति न जानने ही का कारण है कि पृथ्वीराज की स्वर्ण प्रतिमा ड्योढ़ी पर स्थापित की गई।

जयचन्द—(स्वागत) क्या करूं क्या न करूं यह तो बड़े विकट कलहतर कवि से काम पड़ा है। (प्रकाश)। अच्छा अब इन सब पचड़ों को दूर करो अब उन कन्याओं का कुछ

वर्णन करो जो तुम्हारे लिये रनिवास से पान ला रही हैं

चन्दबरदाई—महाराज आप के रनिवास में जहां परिन्द पर नहीं मार सकता भला वहां का वर्णन मैं कैसे करूं पर आप की इच्छा देख कहता हूं सो सुनिए । आपके महल की दासियां षोडस वर्षीया बालाएं ऐसी सुन्दर हैं जैसे सुरपति की रानी सची की सहचरी हों उन सुकुमारियों के शरीर से सदा केसर की सुगन्ध आती है । उनके लाल तलुआ मनों पूनों का चन्द्रमा हो । उनके पैरों और पाजेब का छन छन शब्द मानों हंस के बच्चों का कल्लोल है । उनकी चिक्कन पिंडुलियों में ऐसी सुरखी झलकती है मानों लाल लाल इंगुर भरा हो। उनकी मुठी भर पतली सी कमर देख यह उपमा आती है जैसे धर्म ने काम और लोभ को कपट कर उन पर अपनी ध्वजा जमाई हो ।

जयचन्द-(स्वगत) यह कवि तो विचित्रही अदृश्य काव्य करने वाला है । (प्रकाश) बस इतनीही

चन्दबरदाई— हां हां और भी सुनिए उदर पर सूक्ष्म रोम राजि और पीठ पर बड़ी बेनी देखकर यह भाव मन में आता है मानों उनके हृदय दुर्ग पर चढ़ने के लिए ये काम देवने दोहरे कमंद लगाए हों । उनके सचक्कन कपोल, कुन्द-कली सी दंत पंक्ति दीपशिखा एवं की काम मंजरी सीना

कटका और कमान बक्र भौहें हैं। मैं कहां तक वर्णन करूं।

[दो चार सहेलियों के साथ कर्नाटी का प्रवेश कर्नाटी पृथ्वीराज को देखकर घूंघट काढ़ती है। समस्त सभा में सन्नाटा छा जाता है। जयचन्द के दरबारी परस्पर बार्तालाप करने लगते हैं।)

एकदरबारी—यही खवास पृथ्वीराज है।

दूसरा दरबारी—नहीं उसके साथियों में से कोई है।

रामसिंह—घरआये शत्रु को छोड़ना क्यों। मारो जाने न पावे।

जयचन्द—ठहरो जल्दी न करो। देखो जाता कहां है।

कबिचन्द—(कर्नाटी को संकेत कर कहा) वहां से कैमास के प्राण लेकर यहां आई। अब क्या राजा को भी फंसावेगी।

कर्नाटी (पट उतार कर) कबिचन्द घबड़ाने की कोई बात नहीं है।

जयचन्द—क्यों कर्नाटी घूंघट काढ़ने तथा हटाने का क्या कारण है?

कर्नाटी—महाराज कबिचन्द-पृथ्वीराज के अंतरंग सखा हैं इससे मैं उनकी आधी लज्जा करती हूं।

जयचन्द—(कबिचन्द को पान देकर) अच्छा आज सभा बिसर्जन होती है। अस्तु मंत्रिवर नगर के पश्चिम प्रान्त में चन्द कबि का डेरा करा दो।

मंत्री—जो हुक्म अन्न दाता जी।   (सभा बिसर्जन)

यवनिका पतन

॥ दूसरा अङ्क समाप्त ॥

दस मिनट विश्रान्ति

तीसरा अङ्क ।

पहिला दृश्य ।

स्थान—रंगमहल काल—दोपहर

(संयोगता की चित्रसारी में कन्हकाका पृथ्वीराज तथा सामन्तगण आते हैं)

संयोगता—वीरों का वाक्य सदा ठीक नहीं होता प्राणप्यारे ! क्या यही चौहानी अनी है ।

१ सखी—हे राजकुमारी ! तूने भी तो ऐसे को दिल जिसे तेरा पिता तेग में होकर देखता है । उसके लिये तक कलपोगी, जिसके ऊपर हजारों हाथ उठाये हैं ।

संयोगता—(ढाढ़ मारकर) अरी सखियो ! क्यों नमक लगाती हो । मरे को गाली देने से क्या हाथ आवे

२ सखी—संयोगता धीरज धरो । इतनी अधीर मत

संयोगता—अन्धा आरसी नहीं देख सकता । संगीत का स्वाद नहीं पा सकता है । और निर्बल पर जय नहीं पा सकता है । इसी तरह करम लिखी के किसी की बुद्धि विद्या एक नहीं चलती ।

३ सखी—संयोगता अब क्या करोगी। बिना बिचारे जो करे सो पाछे पछताय।

संयोगता—ठीक है--गुरुजनों की इच्छा के विरुद्ध माता पिता के मना करते हुए भी जो कार्य किया जाता है उसका परिणाम कदापि अच्छा नहीं होता।

१ सखी—संयोगता! थोड़ा अपने को सम्हाल कर रखो।

संयोगता—मैं अपने को क्या सम्हालूं। हा! या तो यह बात झूठी है कि, शूर वीर पुरुष सदा सच्चे होते हैं, या राजा ही कायर है।"

(पृथ्वीराज का कन्हकाका सहित प्रवेश)

पृथ्वीराज—नहीं दो में से एक भी नहीं है री मूर्खा क्या कहती है। हम एक नहीं एक लाख हैं और ऐसे हैं कि हाथी के दांत मूली से उखाड़लें। उठो चलो।

संयोगता— मैं आपके साथ कैसे चलूं, आपके साथी बहुत थोड़े हैं। यदि कहीं मुझे छोड़कर भाग गये तो मैं दोनों दीन से गई। (कुछ सोच करती है)

पृथ्वीराज—अच्छा देर न करो। और जो इन्हीं थोड़े सौ सामन्तों से समस्त पंग सेना नष्ट करदूं तब तो प्रसन्न होगी।

संयोगता-हे नाथ! आपके सौ सामन्त मेरे पिता की सेना के सामने दाल में नोन हैं। क्या आप फूंक से

पहाड़ उड़ाया चाहते हैं । मैं आपसे पल भर भी अल
नहीं रहना चाहती पर मुझे अन्देशा इतना ही है ।

पृथ्वीराज—प्राणप्यारी ! हमारे सामन्त तुम्हारे पि
की सेना से लोहा ले सकते हैं ।

संयोगता—नहींनहीं-सुनो प्राणप्यारे मेरे, पितु की सेन अपार
नहिं पावैं सामन्त सौ, सेना लाख हजार

आर्यपुत्र ! मेरे पिता का दल बल बड़ा है । ज
उनिकी सारी सेना सजती है तब पृथ्वी उथल पथ
होने लगती है । घोड़ों की टाप से उठी हुई धूलि आकाश
इस तरह से आच्छादित होजाती है मानो स्वयं सूर्य भगवा
ने शंकित होकर ऊपर से छाता तान दिया हो । नदीनाले
में कीच निकल आती है, पहाड़ राई हो धूल में मिल जा
हैं । दिग्पाल दहल जाते हैं, फनीस फूस फूस कर फन फट
कारने लगता है ।

गोयन्दराय—हे कमधुज्ज कुमारि ! क्या कहती हो
मैं अकेला सारी सेना सहित जयचन्द को मजा दिखा स
कता हूं पृथ्वीराज के सामन्तों के बिगड़ने से न जाने क्या
हो । भेड़िये का दल सिंह का क्या कर सकता है ।

संयोगता—हाँ ठीक है पर जब पंगदल चलता है तब
पाताल तक में हलचल मच जाती है । शेषनाग को कस-
कर कुंडली मारनी पड़ती है । पंग सेना के भार के कारण

शेष भगवान एक फन से दूसरे फन पर वैसेही बदलते हैं जैसे स्त्री अपनी कोमल अंगुलियों से गरम बरतन को पकड़ती है।

हाहुलीराय—सुनो रानी! हममें से कोई एक अकेला सामन्त तेरे पिता के अस्सी लाख को मार सकता है। आप किस चिन्ता में हैं?

संयोगता—मेरे पिता के यहां बीस हजार बख्तरिये हैं, सोलह हजार निशान हैं। सत्तर हजार हाथी हैं, और तीस लाख अन्य दुधारा और तेगे वाले सवार हैं। पैदलों की तो गिनती कौन करै। ऐसे समूह में फंसकर तुम सौ सामन्त क्या करोगे, सो मेरी समझ में नहीं आता?

चन्द्पुंडीर—हमारा सब दल बल देखा हुआ है। जब हम लोगों ने यज्ञविध्वंस कर दिया तब क्या ये लोग नहीं थे।

कन्हकाका—(आवेश से) यारो धिक्कार है ऐसे क्षत्रिय पुत्र को जो स्वामी की निन्दा कानों से सुनकर जीता रहे। हमारे तुम्हारे रहते संयोगता ऐसी बात करै इधर उधर का कोई भी हमारी शरण आ जाय तो तन में सांस रहते उसकी रक्षा करने से कदापि न फिरें, फिर यह तो अपने घर की बहू है।

संयोगता—(कुछ सोचकर) हा ईश्वर! मेरी तो इस समय कुछ बुद्धिही नहीं काम करती।

कन्हकाका—पृथ्वीराज की अर्द्धांगिनी जब तक कन्ह काका के चोले में दम है, तब तक तू किसी बात की चिन्ता न कर। मुझसे सुर नर नाग सब परिचित हैं। मैं अपनी भुजाओं के बल से सारी सेना सहित कन्नौज को गंगा में बोर सकता हूं, तथा दिल्ली के राजसिंहासन पर बैठा सकता हूं इन सामन्तों के बल से सारा संसार परिचित है। ये सौ तन पर एक मन हैं, और स्वामि सेवा के लिये तो सदा हाथ पर सिर लिये हुए हाजिर रहते हैं इस लिये अबलापन छोड़ कर कलेजा पक्का कर चलने को तैयार हो जाओ।

गोयन्दराय—हाथ कंगन को आरसी क्या? क्या लंगरीराव की बीसा नहीं देखी। मंत्री को मार कर अस्सी लाख सेना में हड़कम डाल दी।

चन्दपुंडीर—सुनो पंगानी शूर वीर घर घर नहीं होते और न कोई हथियार बांध लेने से ही शूर वीर होता है।

बड़गूजर—ठीक तो है सुदर्शन चक्र के सामने काल का बल नहीं चल सकता। जल का स्पर्श करते ही मैल धुल जाती है। गुणी के सामने अताई की कारवाई नहीं चलती, सिद्ध के सामने सिद्धियां बेकाम होती हैं। इसी प्रकार अष्ट-ग्रह और उड़गण समूह के रहते हुए राहु सूर्य और चन्द्रमा को ग्रस लेता है।

अल्हन कुमार—सुनो रानी जिस शरीर में उस सर्वव्यापी परमात्मा की शक्ति के विशेष भाग का वास रहता है वही पुरुष वीर होता है। तुम भली भांति विचार कर पक्की गांठ बांध लो कि ये सौ सामन्त जिनमें एक तुम्हारा भाई भी है तुम्हें दिल्ली पहुंचा सकते हैं।

सलषप्रमार—हे सुन्दरी! जिस प्रकार उस अनादि अनन्त ब्रह्म का किसी ने पार नहीं पाया, उसी प्रकार शस्त्र बल का भी कोई पार नहीं पा सकता। जब पाखण्डरूपी पाप का प्रचण्ड प्रचार होता है तब यह मेघ की धारा बरस कर धरा पर प्रलय कर देता है, सो आज यह पृथ्वीराज मेघ कनौज का प्रलय करेगा।

देवराजबग्गरी—हां और इस पंगसेना के प्रलय में सुन्दरी संयोगता सहित राजा पृथ्वीराज इस तरह से सुरक्षित रहेंगे जैसे मृणाल का कंदर्प।

अल्हनकुमार—हे सुन्दरी संयोगता! हम लोग पंग दल रूपीसमुद्र को अगस्त की अंजुली होकर आचमन कर जायेंगे

सलषप्रमार—हम लोग बात की लाज पर प्राण देने वाले क्षत्रिय हैं। हम लोगों के पंचतत्व रचित तनपिंजर में पंच प्राण रहते हुए राजा को आंच नहीं आ सकती।

संयोगता—किसी गहन वन में एक तालाब था, जिसमें

नाना प्रकार के कमल फूले हुए थे। एक कमल पर रस लो[illegible] भौंरा आन बैठा और सन्ध्या के कारण वह कमल बन्द हो गया। उसने विचारा कि चलो रात्रि तो आनन्द से कटेगी प्रातःकाल उड़ चलेंगे, पर सूर्योदय के पहिलेही एक गयन्द कमल को निगल गया।

दाहिमा नरसिंह—रानी देर करना वृथा है, आप चलें, जब पंगसेना के बीच में पहुंचना तब देखना कि क्या तमाशा होता है। हम सामन्त भागने वाले नहीं है।

सारंगराय—हे पंगकुमारी हम लोग सदा खड्गधार की नाव पर से संसार के पार होने को तैयार हैं। पृथ्वीराजरूपी सूर्य चल होगा और हम लोग सुमेर शिखा की तरह अचल रहेंगे। (संयोगता की ओर अंकित कर) तुम्हारे किरणरूपी प्रताप से हजारों कायर लोग मारे पड़ेंगे।

चन्दपुण्डीर—संयोगता हम लोगों को लौन समझ हम एक एक सामन्त लाख लाख का मुहं तोड़नेवाले हैं। पंग सेना रूपी प्यास के लिये हम को अग्नि समझो।

निड्डुरराय—इन व्यर्थ की बातों में क्या रखा है। सौ बात की बात यह कि चलना हो तो जल्दी करो नहीं तो दिल्ली की दिशा को अर्घ दो।

गोयंदराय—हे पंग कमधुज कुमारी देर करने का काम

नहीं है उठो चलो जल्दी करो। हम सब सामन्तों की यही बात पक्की है कि अपने जीते जी आप दोनों पर आंच न आने देंगे।

संयोगता—(स्वगत) हाय मुझ पापिन के कारण इन वीरों को कितनी मानसिक व्यथा होगी। ये सब मारे जायेंगे पर अपनी अचल कीर्ति छोड़ जायेंगे।

पृथ्वीराज—इसका सोच विचार क्या करती हो, मरना जीना तो लगाही रहता है।

संयोगता—(स्वगत) जब पहिले मैंने प्रण किया तब नहीं सोचा। भाई बन्धुओं ने बहुत धिक्कारा, गुरुजनों ने समझाया, पिता का पक्ष बिगाड़ा, सारे जमाने ने जिसके जो मुहं आया सो कहा, तब नहीं सोचा, अब सोचने से क्या होता है। जो स्वामी को पाकर भी छोड़ देती हूं तो दोनों दीन से जाती हूं। (संयोगता पृथ्वीराज का हाथ पकड़ कर) चलो प्राणप्यारे चलो अब हमारी लोक लज्जा तुम्हारे हाथ है। (पृथ्वीराज संयोगता का हाथ पकड़ कर चलने को तत्पर होते हैं)

कन्हकाका—शूरवीरों अब अनीपर कनी खाकर असि धार पर यात्रा करो। संयोगता का आज हरण हुआ अब इसकी रक्षा तुम्हारे ऐसे वीरों के हाथ है। (सब वीर गण संयोगता को बीच में कर आगे बढ़ते हैं)

दूसरा दृश्य

स्थान—जंगलका एक भाग **काल-रा**

(नेपथ्यमें मार काट का कोलाहल होता है और पृथ्वीराज तथा संयोगता दो चार सामन्तों के सहित आती है ।)

पृथ्वीराज—जान पड़ता है कि मेरा किया सब व्य जायगा। लड़ते २ आज कितने दिवस व्यतीत हो गये कितने सामन्त मारे गये पर अभी तक सकुशल घर पहुंचन असम्भवही मालूम पड़ता है।

अल्हनकुमार—दीनानाथ ! घर चाहे पहुंचे वा पहुंचे पर कोई यह तो नहीं कहैगा कि आपने धर्म के पालन में कोर कसर रखी ।

कन्हकाका—अरे अब बाकी ही क्या रहा। बड़े बड़े सब सामन्त मारे गये, क्या अब वैसे सामन्तों से स्वप्न में भी भेंट हो सकती है।

पृथ्वीराज—इसी लिये तो काकाजी मेरा हृदय घर जाने को नहीं करता है, जी चाहता है कि जैसे उन सामन्तों का शरीर पंच तत्व में मिल गया उसी प्रकार मेरा भी मिले तभी अहो भाग्य। देखिये मेरेही कारण प्यारी संयोगता को भी तीन चार घाव लगे हैं ।

संयोगता—प्राणनाथ ऐसा कह कर मुझे लज्जित न

करें। मुझ अभागिन के कारण आपको इतने दारुण दुःख उठाने पड़े, भला उसके लिए और कौन उत्तरदाता है।

पृथ्वीराज—कुछ नहीं, कारण कोई नहीं है। प्यारी संयोगता तुम्हारी आत्मा यह तो नहीं कहेगी कि जिसके लिए तुमने तन मन धन अर्पण किया था, वह अपने कर्तव्य से विमुख हो गया।

(पृथ्वीराज को दुख में जान कन्हकाका तथा अन्य सामन्त गण इधर उधर गये)

संयोगता—प्राणनाथ! मुझे एक बात का बड़ा शोक है कि मुझ अभागिन के कारण आपको क्या २ नहीं देखना पड़ा। घर छूटा, सामन्त छूटे, अब हम दोनों की भी संसार छोड़ने की पारी आई।

(नेपथ्यमें कोलाहल)

पृथ्वीराज—(स्वगत) हा! पृथ्वीराज! इस समय तू अपनी प्यारी की भी रक्षा नहीं कर सकता। हाय! प्यारी ने चलते समय अपने पिता की सेना की तारीफ करके कहा था कि उसके पिता की सेना असंख्य और बड़ी जोरावर है हाय! यदि इस समय वह ताना मार कर कहेगी कि आपका वह बल तथा पराक्रम कहां गया तो हम क्या उत्तर देंगे।

संयोगता—प्राणनाथ ! आप किस सोच में पड़े हैं, भल आपने अपनी भरसक कुछ बाकी रखी। एक दिन मरनाही था कल न मरे आज मरे ।

पृथ्वीराज—प्यारी ! ऐसा कह कर मुझे न लजावो ।

संयोगता—भला इसमें लजाने की क्या बात है, आज यदि युद्ध करते २ हम दोनों काम आए, तो भला इससे बढ़कर और बात क्या हो सकती है।

पृथ्वीराज—देखो संसार में जो बिना। बिचारे, और बड़ों की बात के बिरुद्ध चलता है उस की ऐसीही दशा होती है। अब मेरी तो यही इच्छा है कि बिना सामन्तों को सूचना दिये ही हम दोनों आज कट मरें फिर पीछे किसी का ताना तो न सुनेंगे। (नेपथ्य में कोलाहल कि यही पृथ्वीराज है पकड़ो जाने न पावे)

पृथ्वीराज—बस आवो यही तो हम चाहते थे (संयो- गता से) प्यारी संयोगता बस हम दोनों के कर्तव्य पालन करने का समय आ गया । चलो, तुम भी जिरह बख्तर पहिने हो और मैं भी आज चौहानी तलवार लिये मारने को तैयार हूं ।

संयोगता—भला इससे बढ़कर और बात क्या होसकती है।

पृथ्वीराज—अच्छा तो आवो हम दोनों एक बार मिल

लौं फिर तो स्वर्ग में ही भेंट होगी। (दोनों मिलते हैं)

(नेपथ्य में फिर कोलाहल)

पृथ्वीराज—अरे जयचन्द! तू क्या अपने चेला चपाटियों को भेज रहा है, स्वयं एक बार सामने आ तो अपने इस धनुष टंकार ही से तुझे बहिरा कर दूँ। (संयोगता से) संयोगता आओ अब विलम्ब करने का समय नहीं है।

संयोगता—(धनुष और तलवार सम्हाल कर) आई प्राणनाथ !(दोनों चलने को तत्पर होते हैं और कन्हकाका आते हैं।)

कन्हकाका—पृथ्वीराज यह तुम क्या कर रहे हो। हमारे रहते तुम कहाँ जाते हो।

पृथ्वीराज—काका जी अब छोड़ दो, आज यातो मैं ही रहूंगा अथवा जयचन्दही ?

कन्हकाका—यह सब पीछे करना पहिले आज हमें जाने दो। जब तक यह कन्ह लड़ेगा तब तक तो तुम दस कोस जमीन निकल जावोगे। (अन्य सामन्तों से) सामन्तों पृथ्वीराज को निकाल ले चलो, आज यह बूढ़ा कन्ह अपना हाथ दिखावेगा (एक ओर प्रस्थान)

संयोगता—बाईं भाग पर तो काका कन्ह गये पर दहिने भाग पर कौन जायगा ?

अचलेशराय—देवी इस दास का शरीर हाजिर है

पृथ्वीराज—नहीं नहीं मैं ही दहिने भाग पर जाऊंगा।

अचलेशराय—दीनानाथ! आप इस समय कहीं न जाइये। टिड्डी दल की नाईं पंग की सेना घेरे है, कहीं कुछ बिगड़ा तब भारी अनर्थ होगा। मैं दहिने भाग पर जाता हूं आप बीच में होकर आगे बढ़ें।

पृथ्वीराज—(स्वगत) धन्य है राजपूतो धन्य है, भला तुम्हारे सिवाय और किसमें इतना स्वार्थ त्याग होगा।

अचलेशराय—अब आप सोचते क्या हैं, बिना विचारे आगे बढ़िये और मैं दहिने भाग पर जाता हूं।

(नेपथ्य में कोलाहल)

संयोगता—(एक ओर देखकर) अरे यह तो शत्रु एक दम सिर पर आ गये। (पृथ्वीराज से) प्राणनाथ! अब ठहरने का मौका नहीं है, चलिए घोड़े पर जल्दी सवार होइये।

अचलेशराय—अच्छा तो मैं चला, (मस्तक नवाकर एक ओर जाता है)

पृथ्वीराज—ईश्वर तुम्हें सफलता दे। धन्य है शूर वीरों के यही लक्षण हैं कि सदा अपने स्वामी के सांकर में सहाय हों। पंचतत्व के पुतले हम तुम और ये आश्चर्य

जनक प्रपंच सब चले जायंगे पर यह सुकीर्ति संसार में सदा स्थिर रहेगी कि सौ सामन्तों ने असंख पंगदल का मुंह तोड़ कर संयोगता सहित पृथ्वीराज को बेदाग बचा लिया। (संयोगता से) प्यारी आवो, वह देखो जयचन्द की सेना उमड़ी चली आ रही है। (दोनों का सवेग प्रस्थान)

तीसरादृश्य।

स्थान पृथ्वीराज का दरबार काल—दोपहर।

(भाट चेतावनी पढ़ता है)

पहिला भाट—सावधान सामन्तगण, रहहु सभा के बीच।
आवत सम्भरि नाथहीं, दलि जयचन्दहिं नीच॥

दूसरा भाट—सत्य है उस पृथ्वीराज का मुकाबलाही कौन कर सकता है जिसने कि,—

टेक हेतु जयचन्द कर, सेना हत्यो अपार।
ले ताकर तनया सुघर, आवत एहि दरबार॥

(नेपथ्य में शंखध्वनि)

सब सामन्त—वह महाराज चन्दवरदाई सहित आ रहे हैं। (चन्दवरदाई सहित पृथ्वीराज का प्रवेश) महाराज पृथ्वीराज की जय।

(पृथ्वीराज राजसिंहासन पर बैठते हैं और गायिकायें आकर गाती हैं)

गाना आओ आओ सबै हिलमिल करके देवैं बधाई ॥
कर्मवीर, शूरवीर, धर्मवीर, दानवीर, सदासहाई
आखिर संयोगता अपनेही घर में आई ॥

पृथ्वीराज—मेरे प्यारे भाइयो ! आज उस जगदीश्वर की कृपा से और शूर वीर सामन्तों के उद्योग से अपनी प्यारी दिल्ली देखने का सौभाग्य प्राप्त हुआ । जिस टेक और मान मर्यादा के लिये हमारे पूर्व पुरुष क्षत्रिय वीरों ने तिल के समान प्राण विसर्जन किए थे आज वही हमें प्राप्त हुई । अहा ! जब जयचन्द का वह हृदय विदारक तथा अपमान जनक स्वयंवर प्रतिमा स्मरण आता है, तो एक बार रक्त उबल उठता है । पापी ने न जाने क्यों, और किस अर्थ के लिए ऐसा किया । उसके हजारों नहीं वरन लाखों आदमी काटे गये । व्यर्थ का रक्तपात हुआ, हमारे भी चौंसठ वीर सामन्त और एक हजार राजपूत मारे गये । पर क्या हुआ, कोई यह तो नहीं कहेगा कि पृथ्वीराज ने जयचन्द के भय से वीर कन्या को न बचाया ।

चन्दबरदाई—धर्मावतार आपने अपना धर्म निबाहा स्त्रियों के अपमान करने वालों को ऐसाही समुचित दण्ड देना चाहिए । देखिये-

सीता कर अपमान हेतु रावनहूं मार्यो ।
कौरव कुलहू नस्यो, द्रोपदिहिं जो अपमान्यो ॥

पृथ्वीराज—भला मैंने क्या किया, सो सामन्तों ने

जो वीरता दिखाई सो प्रशंसनीय है। सुना जाता है कि उन सात सामन्तों का शव बड़ीही कठिनता से पाया गया।

चन्दबरदाई—हां धर्मावतार! ऐसा भयंकर युद्ध उन सामन्तों ने किया था कि एक बार जयचन्द की सेना में हड़कम मच गया।

पृथ्वीराज—अहा भोंहाराय, कनकराय, बड़गुज्जर, और अल्हनकुमार इत्यादि वीरों का जब स्मरण करता हूं तो एक बार रोंगटे खड़े हो जाते हैं। सुना जाता है कि निड्डुरराय की बानावली से भिद कर महावतों के हजार हजार अंकुश गड़ने पर भी पंग सेना के हाथी आगे पैर न देते थे।

गुरुराम—धर्मावतार वहां पर मैं भी तो था। निड्डुर राय की वीरता अद्वितीय थी, साथही उसके वीर सिंहराय राठौर ने भी अपने साथियों का साथ दिया।

चन्दबरदाई—और छगनराय ने प्रथम तो घोड़े पर से युद्ध किया, पर घोड़ा मरने पर उसने पैदल ही सैकड़ों मुण्डिकायें काटीं, फिर जब उसके हाथ पैर कट गये, तब बिच्छू की चाल चलते २ शत्रुओं का संहार कर आप भी वीर गति को प्राप्त हुआ।

पृथ्वीराज—मैं कितने वीरों का नाम गिनाऊं। अहा! जब वह अन्तिम समय सोरापुर के निकट वाला विकट

संग्राम याद आता है । तो हृदय कांपने लगता है उस समय मेरे बचने की कोई आशा न थी पर, अल्हनकुमार और अचलेश्वराय ने जान बचाई, फिर इस के बाद भी जब मैं पंग सेना से घिर गया, उस समय काका कन्ह ने जिस अतुल पराक्रम से अपना जीवन विसर्जन किया सो मुझे कभी न भूलेगा ।

चन्द्बरदाई—धर्मावतार ! अब इन वीर सामन्तों का स्वप्न में भी पाना कठिन है इनकी समता के, अब भारत में वीर नहीं हैं ।

पृथ्वीराज—कविराजाजी ! भला इनकी मृत आत्मा के लिए मैं क्या कर सकता हूं, पर इतना अवश्य हो कि निडुरराय के पुत्र, वीरचन्द् के नाम बीस गांव, पांच घोड़े और एक हाथी तथा सिरोपाव दिये जांय, कन्हकाका के पुत्र ईश्वरदास को पन्द्रह गांव एक हाथी और आठ घोड़े दिए जांय, गोवंद्राय गहलौत के पुत्र सामन्त सिंह को बारह गांव और पांच घोड़े तथा, तीन गांव दिए जांय । चन्द पुंडीर के पुत्र धोइ पुंडीर को इसके पिता का जागीर दे दिया जाय ।

चन्द्बरदाई—महाराज ऐसाही होगा ।

पृथ्वीराज—नहीं आप इन वीरों के नाम परवाना लिखें, कि जब तक हमारे वंश के लोग राज करैं, इनकी

गणना बड़े ही बड़े सामन्तों में हो! (सामन्तों के पुत्रों से) देखो वीर पुत्रो, ऐसा न हो कि तुम लोग अपने २ पिता के नाम की हंसाई करावो, बिलास प्रियता में पड़कर अपने पिता का नाम डुबावो और पृथ्वीराज की कीर्ति पर धब्बा लगावो।

सब सामन्त पुत्र—महाराज ऐसा कभी न होगा।

गुरुराम—महाराज ये लोग भी अपने पिताही के गुणों का अनुकारण करेंगे।

पृथ्वीराज—करनाही चाहिए, सिंह के बच्चे सिंहही होते हैं। (चन्दबरदाई की ओर देखकर) बरदाई जी मैं आपका जन्म भर के लिए आभारी हूं। आपने जिस चतुराई और वीरता से संयोगता के पाने में सहायता की सो परम प्रशंसनीय है। अहा! जयचन्द की सभा में भेष बदलकर जाना, फिर करनाटकी का घूंघट काढ़ना, तथा इसे संकेत द्वारा समझा बुझाकर हमारे प्राण की रक्षा करना, तुम्हाराही काम था। (गुरुराम से) पुरोहितजी आपका भी साहस सराहनीय है। संयोगता के महल में हमें ढूंढते २ जाना यह आपही का साहस था।

(त्रिम्बक का प्रवेश)

त्रिम्बक जी—महाराज की जय, हो, नई बधू की बधाई है। (स्वगत) अरे यार अब तो यही समय तार बांधने का है नहीं तो शंखही फूंकते रह जायेंगे।

(इच्छनी कुमारी का प्रवेश)

इच्छनीकुमारी—प्राणनाथ नई बधू की बधाई है, इसके उपलक्ष में मैंने दस लाख मुद्रा और सौ गांव दिए, आप जिसे चाहें उसे भेंट करें।

पृथ्वीराज—राजमहिषी! सामन्तों को तो मैं दे चुका, आप उनकी स्त्रियों तथा महल की दास दासियों में बांट दें।

इच्छनी—जोआज्ञा प्राणनाथ, पर एक विन्ती और थी।

पृथ्वीराज—वह क्या।

इच्छनी—यही की आज बड़ा शुभ मुहूर्त है, इस लिए आज ही पाणि ग्रहण होना चाहिए।

पृथ्वीराज—क्या मैंने आपकी कोई बात टाली है।

इच्छनी—अच्छा तो (दास से) सेवक जाकर महलों में दासियों से कहो कि संयोगता को सोलहो शृंगार कर सभा में भेजें।

सेवक—जो आज्ञा महारानी जी (प्रस्थान)

(चोबदार का प्रवेश)

चोबदार—घणी खमा अन्नदाताजी कन्नौज से एक पुरोहित देवता आए हैं, साथ में बड़ा सामान लाए हैं। उनकी प्रार्थना है कि आपसे दो चार बातें करें।

पृथ्वीराज—(स्वगत) कन्नौज से दूत आने का क्या प्रयोजन है। (प्रकाश) हाँ हां उन्हे शीघ्रही भेजो।

चोबदार—जो आज्ञा। (प्रस्थान)

पृथ्वीराज—बरदाईजी ! कन्नौज से पुरोहित के आने का क्या कारण है कुछ जान नहीं पड़ता कि बात क्या है।

(चोबदारका पुरोहित के साथ साथ प्रवेश)

पुरोहित—घणीखमा अन्नदाताजी! पंगराज ने हमको आपके पास भेजा है।

पृथ्वीराज—किस कारण से ?

पुरोहित—ब्याह के निमित।

पृथ्वीराज—यह क्यों क्या पहिले नहीं सूझी थी।

पुरोहित—पर महाराज अब सूझो है उन्हों ने कहा है कि जो कुछ हुआ सो हुआ पर अब मर्य्यादा सहित बिवाह हो।

पृथ्वीराज—क्या दहेज में भी कुछ भेजा है ?

पुरोहित—हां, जरीदार जड़ाऊ साज, गंगा जमुनी हौदे और अम्मारियों से सजे हुए एक सौ आठ हाथी जड़ाऊ जीन, रेशमी पट्टे, और सुनहरी पाखरों से सजे हुए अच्छे २ खेत के आठ हजार अच्छे २ घोड़े।

पृथ्वीराज—अस्तु दहेज से मुझे कुछ काम नहीं पर "मर्य्यादा सहित बिवाह हो यही शब्द मेरे लिए बहुत हैं।" चन्दबरदाई इसमें आपकी क्या सम्मति है।

चन्दबरदाई—महाराज ! अब जब दीन याचना क रहा है तो उस की प्रार्थना स्वीकार हो।

पृथ्वीराज—(पुरोहित से) केहरी कंठीर तुम जाकर जय चन्द से कहना कि मैंने उनकी बात स्वीकार कर, और तुम्हारे ही सामने यथा विधि संयोगता का पाणि ग्रहण किया

(संयोगता का सखियों के साथ साथ प्रवेश)

चन्दकवि—आवो भारत की क्षत्रानी संयोगता आवो, और तन मन धन से आज फिर अपने को पृथ्वीराज के अर्पण करो (एक दूसरे के हाथ पर हाथ रखकर) (पृथ्वीराज से) देखो पृथ्वीराज जिस संयोगता ने तुम्हारे लिये सर्वस्व त्यागा उसको इस जन्म में तुम कभी मत त्यागना।

पृथ्वीराज—चन्दबरदाई हमें आपकी आज्ञा सदा शिरोधार्य है।

सब सामन्त—हम सब सामन्त लोग आपको आन्तरिक हृदय से धन्यवाद देते हैं कि वर बधू की कार्ति जबलौं सूर्य चन्द आकाश में स्थित हों तब तक रहे।

चन्दबरदाई—पृथ्वीराज तुम और कुछ बरदान मांगो।

पृथ्वीराज—कविजी ! भला जहां आप हों वहां किसी बात की त्रुटि हो, ईश्वर की कृपा से सब कुछ है पर आप के आग्रह पर हमारा यही निवेदन है कि—

अपने अपने स्वार्थ को, तजि भारत सन्तान।
सदा सर्वदा देश की, उन्नति करैं महान॥

चन्दबरदाई—अस्तु ऐसाही हो, पर पृथ्वीराज ! तुम्हारे पराक्रम पर हमारा चित इतना प्रसन्न है कि तुमको बिना आशीर्वाद दिये नहीं रहा जाता। इसलिये—

लक्ष्मीस्ते पङ्कजाक्षी निवसतु भवने भारती कंठ देशे
वर्धन्ताम् बंधुवर्गाःप्रबलरिपुगणाःयान्तुपातालमूले,
देशेदेशेचकीर्तिःप्रभवतुभवताम् पूर्णकुन्देन्दु शुभ्रान्
जीवत्वम् पुत्रपौत्रैःसकलगुणयुतैःस्वस्तिनेनित्यमास्ताम्

सब सामन्त—महाराज ऐसाही हो।

सब सखियां—ईश्वर करैं हमारी रानी संयोगता सदा सुहागीन हों, और चौहानपति—

रहैं सदा शत्रुन पर भारी॥ टेक॥

इनकी कीर्ति कला सों होवे द्वीप द्वीप महं उजियारी
फहरै सदा ध्वजा भारत को कीर्ति सहित अति सुखकारी।
माणिक मणि सों जटित छत्र चमकै सोनन की द्युतिकारी॥

यवनिका पतन।

समाप्त।

माणिक ग्रन्थमाला के नियम।

१—यह ग्रन्थमाला हर तीसरे महीने मार्च, जून, सेपटेम्बर, और दिसम्बर में सुन्दर २ चित्रों सहित निकला करेगा।

२—वर्ष भर के लिये सबसे केवल १॥) लिया जायगा।

३—इतिहास का प्रचार करना ही ग्रन्थमाला का उद्देश्य है। इसमें अच्छे २ ऐतिहासिक नाटक, शिक्षा पूर्ण उपन्यास, राममूर्ति के कसरत, तथा सर्व साधारण के पढने लायक पुस्तकें प्रकाशित होंगी। साथही साथ जंगली जानवरों की भयंकर कहानी, जहाजों के डूबने का भयंकर दृश्य रेल गाड़ियों की टक्कर, डाकुओ की डकैती इत्यादि विषयों पर अच्छे २ ग्रन्थ प्रकाशित किये जायेंगे।

४—लिखे हुए पुस्तक भेजने वालों को यह पत्र मुफ्त दिया जायगा पर पुस्तक डबल क्राउन १६ पेजी १२८ पृष्ठ से कम न हो। सभी पुस्तक लिखने वालों को एक मेडल तथा १०) की पुस्तकें भी पारितोषिक रूप में दी जायगी।

विज्ञापन छपाई के नियम।